रहीम-सतसई

[मूल, टीका व आलोचना]

विश्वम्भर 'अरुण' एम० ए०

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

प्रकाशक
विनोद पुस्तक मन्दिर
हॉस्पिटल रोड आगरा

प्रथम संस्करण
सन् १९६२

मूल्य
१.५०

मुद्रक
कैलाश प्रिंटिंग प्रेस
बाग मुजफ्फर खाँ आगरा

स्नेही बन्धुवर

रामकृष्ण अग्रवाल एम० ए०

को सप्रेम

भूमिका

कबीर सूर और तुलसी के बाद हिन्दी भाषा भाषी जन मन में रहीम ही सबसे अधिक लोकप्रिय कवि हैं। रहीम की लोकप्रियता का कारण जीवन के व्यावहारिक पक्ष की गहरी, यथार्थ एवं मार्मिक अनुभूति है। तुलसी सूर आदि की महत्ता उच्च सांस्कृतिक मान्यताओं तथा काव्य की उच्च स्तरीय अनुभूति पर अधिष्ठित है इसके लिए उत्कृष्ट सांस्कृतिक रुचि एवं कला-मर्मज्ञता की अपेक्षा है। जनसाधारण में यह दुर्लभ वस्तु है। जनता के हृदय को तो व्यवहार जगत की प्रतिदिन की अनुभूतियाँ ही अधिक स्पर्श कर पाती हैं। यही कारण है कि नीति सम्बन्धी सूक्तियाँ जन सामान्य का मनोरंजन भी करती हैं और-मार्ग प्रदर्शन भी। रहीम की नायिका भेद आदि की रचनायें कम महत्वपूर्ण नहीं हैं पर जनता के हृदय में तो रहीम अपनी नीति-सम्बन्धी सूक्तियों के माध्यम से पैठ पाये हैं। मुझे परम हर्ष है कि मेरे मित्र मस्त जी ने इस सत्य का साक्षात्कार किया है। रहीम के नीति वाक्यों में निहित जीवन की गहरी एवं मार्मिक अनुभूति को आलोचना व टीका द्वारा सामान्य साहित्य के रसिकों तथा विद्यार्थियों के लिए सुलभ करने का उनका यह प्रयास स्तुत्य है।

इसमें उन्होंने अनेक अस्पष्ट स्थलों की संगति बैठाकर अपनी सूझ का भी परिचय दिया है। आलोचना भाग में भी उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण पक्षों पर विद्वत्तापूर्ण प्रकाश डाला है। रहीम सतसई के सटीक एवं विद्यार्थीपयोगी संस्करण की आवश्यकता थी ही। इसी अभाव की पूर्ति यह ग्रन्थ कर रहा है। मेरा विश्वास है कि हिन्दी-साहित्य तथा विशेषतः विद्यार्थी समाज इससे लाभान्वित होगा।

हिन्दी-विभाग
आगरा कालेज आगरा

डा० भगवत्स्वरूप मिश्र

जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

जीवन-परिचय

मुगल सम्राट अकबर के नवरत्नों में से एक रत्न के रूप में रहीम ने न केवल मुगल दरबार में ख्याति अर्जित की अपितु जनसाधारण में भी वे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त करने में समर्थ हुए। मुगल सम्राट और सामन्तों के बीच यदि वे अपने शासकीय प्रतिभा और शौर्यपूर्ण कार्यकलापों से प्रिय हुए तो जन साधारण में स्वरचित नीतिपूर्ण दोहों और चुटीले बरवों के कारण लोकप्रिय हुए। मध्यकाल की उन विभूतियों में रहीम भी एक हैं जिन्हें इतिहास के पाठकों के अतिरिक्त साधारण जनता भी बखूबी ही जानती है। हिन्दी साहित्य में वे कबीर सूर और तुलसी से कम लोकप्रिय कवि नहीं हैं। उनकी कविता तो निरक्षर और ग्रामीण जनता में भी लोकप्रिय है। आगे हम इन्हीं लोकप्रिय कवि का जीवन-परिचय प्रस्तुत करेंगे।

माता पिता—रहीम का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था। ये तुर्कमान (तातार) जाति के थे। इनके पूर्वजों का आदि निवास स्थान कैस्पियन सागर तथा अरल की तलहटी में कराकुम रेगिस्तान के आसपास था। इनके पिता का नाम बैरमखाँ था। बैरमखाँ ने अजमी से आकर सोलह बरस की उम्र में भारत के प्रथम मुगल शासक बाबर के यहाँ नौकरी की। अपनी

योग्यता और पराक्रम से बराबर वह पदोन्नति करता रहा। बाबर के उत्तराधिकारी हुमायूँ के समय भी वह बाबर का विश्वासपात्र सहायक रहा और राज्य के महत्वपूर्ण कार्यों में सदा भाग लेता रहा। हुमायूँ की मृत्यु होने पर बैरमखाँ ने चौदह वर्षीय राजकुमार अकबर को मुगल सिंहासन पर बैठाया और स्वयं उसका संरक्षक बन राज्य कार्य को सुचारु रूप से चलाया। रहीम की माता मेवात के जमालखाँ की पुत्री थी। जमालखाँ के पूर्वज राजपूत थे और उन्होंने कालान्तर में इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। जमालखाँ की बड़ी लड़की से हुमायूँ का विवाह हुआ था और छोटी लड़की का विवाह बैरमखाँ से हुआ। रहीम का पिता उच्च राजनीतिज्ञ और पटु सेनानायक तो था ही साथ ही कलाप्रेमी और कवि भी था। रहीम को कलाप्रियता शौर्य पराक्रम दूरदर्शिता आदि गुण अपने पिता से पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिले थे। हिन्दू धर्म के प्रति प्रेम, क्षत्रियोचित साहस आदि गुण माता से प्राप्त हुए थे।

जन्म—जब बैरमखाँ आदिलशाह के हिन्दू सेनापति हेमू से युद्ध करने के लिये पानीपत की ओर बढ़ा था तो साथ में उसकी नवविवाहिता गर्भवती पत्नी भी थी। लेकिन मार्ग में ही अपनी पत्नी को उसने लाहौर देखभाल के लिये भेज दिया। पानीपत के द्वितीय युद्ध में हेमू को पराजित करने के बाद जब वह सिकन्दर सूर के उपद्रव दबाने के लिये अकबर के साथ पंजाब की ओर प्रस्थान कर रहा था तो उसी बीच लाहौर में बैरमखाँ की पत्नी ने १७ दिसम्बर १५५६ ई० को रहीम को जन्म दिया। युद्ध के लिये यात्रा के बीच यह समाचार बैरमखाँ तथा मुगलों ने अत्यन्त शुभ समझा। बैरमखाँ को लम्बी प्रतीक्षा के पश्चात् वृद्धावस्था में पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई थी अतः उसके हर्षोल्लास का तो पार ही न रहा। रहीम के जन्म पर मुगलों में खूब उत्सव मनाये गये। रहीम के वे प्रारम्भिक चार वर्ष बड़े ही लाड़ प्यार और वैभव में बीते।

शिक्षा—लेकिन बैरमखाँ के बढ़ते हुए प्रभाव से मुगल दरबार में अनेक षड्यन्त्र चलने लगे और स्वयं अकबर भी आशंकित रहने लगा। हवा का रुख अनुकूल न देख बैरमखाँ अपनी पत्नी और चार वर्षीय शिशु रहीम को लेकर

हज के लिये मक्का की ओर चल पड़ा लेकिन मार्ग में पाटन में एक पठान ने उसका वध कर डाला। इस प्रकार रहीम चार वर्ष की उम्र में ही पिता के प्रभाव से अप्रभावित हो गये। अकबर ने १५६१ ई० में रहीम को अपने पास बुलवा लिया और उसकी शिक्षा-दीक्षा का राज्य की ओर से प्रबन्ध किया। अभिज्ञान के मौलवी मुल्ला मुहम्मद अमीन रहीम के शिक्षक थे उनसे रहीम ने अरबी फारसी और तुर्की की शिक्षा प्राप्त की। इसके अतिरिक्त रहीम ने संस्कृत तथा हिन्दी का ज्ञान भी प्राप्त किया। अकबर के दरबार में राजा टोडरमल बीरबल कवि गंग जैसे हिन्दी के कवि और मर्मज्ञ भी थे इनके अतिरिक्त संस्कृत के अनेक विद्वान भी उसके दरबार की शोभा बढ़ाते थे। अतः इनके साहचर्य में रहीम का संस्कृत तथा हिन्दी की ओर झुकाव होना स्वाभाविक ही था। अपनी प्रतिभा और योग्यता के बल पर रहीम ने केवल अरबी फारसी में ही अथाह ज्ञान प्राप्त नहीं किया था अपितु उसका संस्कृत का शास्त्रीय ज्ञान भी किसी संस्कृत के पण्डित से कम न था। डिंगल के सुप्रसिद्ध कवि सूर्यमल ने अपने ग्रन्थ 'वंश भास्कर' में रहीम के संस्कृत के ज्ञान की प्रशंसा करते हुए उसे भोज के समान बताया है। रहीम ने हिन्दुओं के धर्मग्रन्थों का पारायण भी भली भाँति किया था। यही कारण है कि उनकी कविताओं में उनके पूर्ववर्ती कवि जायसी की भाँति कहीं पौराणिक त्रुटि नहीं मिलती। हिन्दी के वे ऐसे प्रथम मुसलमान कवि थे जिन्हें हिन्दू धर्म और संस्कृति का एक हिन्दू की भाँति ज्ञान था।

पारिवारिक जीवन—रहीम ने अपने असाधारण गुणों से शैशव काल में ही मुगल सम्राट अकबर को प्रभावित कर दिया था। अकबर पहले ही उसके पिता की योग्यता को देख चुका था अतः उसके पुत्र रहीम की योग्यता के सम्बन्ध में वह बहुत कुछ विश्वस्त था। लेकिन बैरमखाँ का पुराना शत्रु दल रहीम की इस उन्नति पर जलता था। अकबर ने उनकी ईर्ष्या को समाप्त करने के लिये इस दल के प्रमुख अमीर मिर्जा अजीज कोका की बहन माहबानो बेगम से रहीम का विवाह कर दिया। अजीज कोका बादशाह की धाय का बेटा होने के कारण दरबार में अत्यन्त प्रभावशाली था। माहबानो बेगम अत्यन्त सुशील और सुन्दर स्त्री थी। रहीम की वैसे और भी बेगमें थी लेकिन प्रधान बेगम

माहबानो ही रही। माहबानो से रहीम को तीन पुत्र रत्न और दो पुत्रियाँ प्राप्त हुईं। दो बड़े पुत्र इरीज और दाराब अपने शौर्य और पराक्रम से शत्रुओं के सदैव भयपात्र बने रहे। लेकिन ये दोनों ही पुत्र असमय ही पिता के सामने काल कवलित हो गये। बड़ा पुत्र तैंतीस वर्ष की अवस्था में अत्यधिक मदिरापान से मर गया और दूसरा पुत्र महाबतखाँ द्वारा मारा गया। तीसरा पुत्र करन नौ वर्ष की अल्पायु में ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। रहीम की एक लड़की जाना बेगम अकबर के पुत्र दानियाल को ब्याही गई और दूसरी का विवाह 'फरहंग जहाँगीरी' के लेखक के पुत्र मीर अमीनुद्दीन से हुआ था। किन्तु दोनों ही पुत्रियाँ थोड़े ही समय पश्चात् विधवा हो गईं। रहीम की अन्य पत्नियों से भी तीन पुत्र थे जिनमें से एक बचपन में ही मर गया था। कुल मिलाकर रहीम का पारिवारिक जीवन अत्यन्त सुखद और सफल था। लेकिन बाद में पुत्रों के निधन और पुत्रियों के वैधव्य से उसे कष्ट भी कम नहीं हुआ।

राजनीतिक जीवन—रहीम का सारा जीवन राजनीति में ही बीता। अकबर ने प्रारम्भ से ही रहीम को राजनीति की भी शिक्षा दी थी। वह दरबार में रहीम को अपने साथ रखता था और बाहर जाते समय भी उसे अपने संग ले जाता था। अकबर ने रहीम को सबसे पहले सन् १५७३ में गुजरात में साबरमती के पास के युद्ध में सेना के मध्य भाग का नायक बनाया था। सेना के मध्यभाग का सेनानायक होना अत्यन्त गौरव की बात थी। सत्रह वर्ष की अल्पायु में ही रहीम ने इस महत्त्वपूर्ण पद को बड़ी योग्यता और कुशलता से निभाया। इस युद्ध में मुगलों की ही विजय हुई। बीस वर्ष की अवस्था में रहीम को गुजरात का प्रशासक बना दिया। यह भी कम गौरव और सम्मान की बात नहीं थी। रहीम की अपार प्रतिभा और अपार योग्यता के बल पर ही अकबर ने यह महत्त्वपूर्ण पद सौंपा था। इसके बाद तो रहीम अनेक बार अकबर और जहाँगीर के समय दक्षिण के तथा और भी प्रान्तों के प्रशासक नियुक्त हुए, अनेक महत्त्वपूर्ण युद्धों के सेनापति भी बने। अपने जीवन के अंतिम दिनों को छोड़ कर वे राजनीति में खूब सजग रहे। उनकी प्रशासनीय योग्यता,

सैन्य संचालन की कुशलता और राजनीतिक पटुता का लोहा तत्कालीन बड़े बड़े सामन्त और स्वयं मुगल शासक अकबर और जहाँगीर भी मानते थे।

मृत्यु—रहीम ने जितना सुख सम्मान और वैभव अपने यौवन काल में पाया जीवन के अन्तिम दिनों में उससे कम कष्ट नहीं पाया। उसकी प्रथम बेगम माहबानो से उत्पन्न पुत्र करन तो तीस वर्ष की अल्पायु में पहले ही मर गया था अन्य पत्नी से उत्पन्न उसका प्रिय पुत्र हैदरी भी दुर्घटना ग्रस्त हो असमय ही मर गया। उसकी जीवन संगिनी प्रथम बेगम माहबानो भी हैदरी की मृत्यु के तीन दिन पश्चात् चल बसी। दोनों पुत्रियाँ भी असमय ही विधवा हो गईं। बड़ा पुत्र अत्यधिक मदिरापान से तथा छोटा पुत्र महाबतखाँ के वध से असमय ही काल कवलित हो गये। बीच-बीच में पदच्युत होने तथा जागीर छिन जाने के कारण उसे मुगल शासक जहाँगीर द्वारा अपमानित भी होना पड़ा। इन सब असह्य आघातों ने उसके वृद्ध शरीर को और भी अधिक जर्जर बना दिया। यद्यपि अन्त में जहाँगीर ने उस क्षमा कर दिया और एक लाख रुपया तथा कन्नौज में जागीर दी लेकिन उसका दिल तो टूट चुका था। फलतः जब नूरजहाँ ने महाबत खाँ के विद्रोह के दमन के लिये रहीम को सिन्धु पार भेजा तो बीच में लाहौर में ही बीमार पड़ गया। बीमारी की दशा सुधरते न देख उसे दिल्ली लाया गया। और दिल्ली में ही सन् १६२७ में ७२ वर्ष की उम्र में उसका देहावसान हो गया। रहीम ने पहले से ही हुमायूं के मकबरे के पास अपने लिये मकबरा बनवा रखा था उसी में उसे दफना दिया गया। दिल्ली में यद्यपि वह मकबरा अब जर्जर हो चुका है लेकिन अपने साहित्यिक कृतित्व के कारण उसकी कीर्ति अक्षय है।

व्यक्तित्व

अपने समय में रहीम बहुत प्रभावशाली व्यक्तियों में एक माने जाते थे। असाधारण राजनीतिक क्षमता और प्रतिभा के कारण उन्होंने अपने व्यक्तित्व को अत्यधिक प्रभावशाली बना लिया था। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। एक साथ ही वे कुशल राजनीतिज्ञ योग्य प्रशासक और वीर सेनापति थे तो

इसके साथ ही वे भावुक कवि, गम्भीर भावक, कुशल अनुवादक, बहुभाषा विद् और साहित्य मर्मज्ञ भी थे। इतना होने पर भी वे उदार हृदय इन्सान थे। दीन-दुखियों का दुःख दर्द उनसे नहीं देखा जाता था अतः याचकों को किसी भी दशा में वापस नहीं लौटाते थे। गुणी होने के साथ-साथ वे गुणी जनों का आदर करने वाले भी थे। एक कवि के एक ही छन्द पर खुश होकर उन्होंने सात लाख रुपये पुरस्कार में दे दिये थे।

राजनीति में उनकी धाक उस समय के बड़े-बड़े सामन्तों और राजकुमारों, अकबर तथा जहाँगीर बादशाह तक ने मानी। सैन्य संचालन उनकी योग्यता अपूर्व थी ही प्रान्तों के शासन में अधिपति के रूप में भी उन्होंने अपनी असाधारण योग्यता का परिचय दिया। गुजरात तथा दक्षिण कई-कई बार प्रान्तपति तथा अधीक्षक के रूप में नियुक्त हुए।

मुगल शासक परिवार ने उन्हें सदैव सम्मान दिया। अनेक पुरस्कार और बड़ी-बड़ी जागीरें तो उन्हें मिली ही—वैवाहिक सम्बन्धों के कारण भी वे मुगल शासक के परिवार के काफी निकट रहे। उनकी मौसी मुगल बादशाह हुमायूं को ब्याही थी। स्वयं उनकी प्रधान बेगम अकबर के धाय पुत्र की लड़की थी। अकबर के पुत्र दानियाल को उनकी एक पुत्री ब्याही। सलीम के एक पुत्र खुसरो से उनकी भतीजी तथा दूसरे पुत्र खुर्रम (बाद में शाहजहाँ) से उनकी पोती का विवाह-सम्बन्ध हुआ। अकबर के पुत्र सलीम के वे संरक्षक तथा गुरु भी थे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मुगल परिवार से उनके बड़े प्रगाढ़ सम्बन्ध रहे और इन सबका कारण उनकी असाधारण योग्यता और प्रभावशाली व्यक्तित्व ही था।

रहीम अत्यन्त उदार और भावुकहृदय थे। उनमें साहस और परिश्रम करने की भावना कूट-कूट कर भरी थी। प्रतापी भी वे बहुत थे। इन्हीं सब कारणों से वे अपने जीवन में आगे बढ़ते रहे। राजनीति बड़े-से-बड़े व्यक्ति को अपने दलदल में फाँस लेती है। रहीम भी राजनीति की गन्दगी से न बच सके। अपने जीवन में उन्हें भी इस प्रकार का सहारा कभी कभी लेना

पड़ा यद्यपि इसके लिये उनकी आत्मा धिक्कारती रही। जीवन के अंतिम दिनों में तो वे कुरान को साक्षी मानकर भूर्गम को दिये गये वचन तक का निर्वाह न कर सके फलतः क्षुद्र स्वार्थ से प्रेरित होकर जीवन के महान आध्यात्मिक मूल्यों को ठुकरा दिया। बर्बर पत्नी और पुत्रों के सामयिक निधन के आघात कठिन और विषम परिस्थितियों और बर्बर वृद्धावस्था से उनका व्यक्तित्व अन्त में टूट कर बिखर सा गया था। फलतः उसमें वह तेजस्विता नहीं रह गई थी जिसके आगे अनेक विभूतियां नत मस्तक हो जाती थीं। समय बड़ा प्रबल है वह किसे नहीं तोड़ देता वह किसे नहीं झुका देता। समय का यही प्रहार रहीम पर भी पड़ा था। फिर भी रहीम का व्यक्तित्व मध्यकाल के शासकों से इतर व्यक्तियों से कम प्रखर और प्रभावशाली नहीं था।

साहित्य साधना

रहीम का जीवन अधिकांशतः राजनीतिक उलझनों और युद्धों में बीता था। अतः साहित्यसेवा के लिय उनके पास अवकाश बहुत कम था फिर भी अपने अत्यधिक व्यस्त जीवन में से भी व साहित्य के लिये पर्याप्त समय निकाल लेते थे। वे अन्य कवियों और लेखकों की रचनाएं बड़े ध्यान से सुनते एवं पढ़ते थे तथा कवियों को खूब सम्मान देते थे। गंग क एक छप्पय पर ३६ लाख देना तो प्रसिद्ध है ही अपने समय के सभी प्रतिष्ठ कवियों और विद्वानों से उनके मधुर सम्बन्ध थे। इसके साथ ही स्वयं रहीम ने पर्याप्त परिमाण में साहित्य का सृजन किया है। विद्वानों के अनुसार रहीम रचित ग्रन्थों की सूची इस प्रकार है—

(१) दोहावली अथवा सतसई (२) नगर शोभा (३) बरवै नायिका भेद (४) बरवै (५) मदनाष्टक (६) शृङ्गार सोरठा (७) रहीम काव्य (८) खेट कौतुकम् और (६) फुटकर छन्द।

इनके अतिरिक्त कुछ विद्वानों के मतानुसार "रासपंचाध्यायी' नामक काव्य ग्रन्थ के रचयिता भी रहीम थे किन्तु यह कृति अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी है। फारसी में भी रहीम ने दीवान लिखा था जो उपलब्ध नहीं हो सका है।

फारसी में रहीम द्वारा रचित कुछ छन्द अवश्य प्राप्त होते हैं उनकी फारसी में रचित रचनाओं के कुछ उदाहरण "तुजुके जहाँगीरी" "दस्तूर-कलीम" तथा "मआसिरे रहीमी" ग्रंथ से मिलते हैं। तुर्की में लिखित बाबर की आत्मकथा 'तुजुके बाबरी' का रहीम ने फारसी में अनुवाद किया था जिससे सम्राट अकबर बड़ा प्रसन्न हुआ था और रहीम को एक जागीर दी थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि रहीम ने अपने व्यस्त राजनीतिक में से भी समय निकाल कर विभिन्न भाषाओं में महत्वपूर्ण साहित्यिक ग्रन्थों की रचना करती थी।

रहीम का नीति काव्य

नीतिकाव्य का स्वरूप—'नीति' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की 'णीञ्' धातु से सम्बन्धित मानी गई है। "णीञ्' का अर्थ है। 'आगे ले जाना' "अतः "नीति" शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ ही है 'आगे ले जाना' अथवा "प्रगति"। सृष्टि के इतिहास में 'विकास' का बड़ा महत्त्व रहा है। मानव का इतिहास तो आदिकाल से विकासवान् रहा है और यह विकास 'आगे की ओर' या प्रगति सूचक ही रहा है। यह कथन अतिशय न होगा कि मानव-जीवन में 'प्रगति' का बड़ा महत्त्व है और चूँकि मानव स्वभावतः 'प्रगति' का प्रेमी है, अतः "नीति" का उसके लिये सर्वाधिक महत्त्व है। समस्त समाज "नीति" का आलम्बन लेकर ही प्रगति कर सका है, आज भी कर रहा है और भविष्य में भी करता रहेगा। नीति से विहीन मानव-समाज का संचालन कल्पनातीत है। 'शुक्रनीतिसार' नामक नीतिशास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ में नीति की महत्ता के बारे में स्पष्ट लिखा है—"जिस प्रकार भोजन के बिना प्राणियों की देहस्थिति नहीं होती उसी प्रकार नीति के बिना लोक की व्यवहार स्थिति नहीं होती।" अतः जिस "नीति" का मानव-जीवन में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है भला उससे मानव भावनाओं का प्रतिनिधित्व करने वाला काव्य कैसे अछूता रह सकता था ? बहुत थोड़े आचार्यों और कवियों को छोड़कर सभी ने काव्य में "नीति" को अत्यन्त आवश्यक माना है। यही कारण है विश्व में प्रायः सभी महान्

कवियों के काव्य में नीति के स्वर मुखरित हुए हैं। आंग्ल महाकवि वर्ड्सवर्थ ने तो स्पष्ट ही प्रत्येक महाकवि को नीति का शिक्षक माना है—

"Every great poet is a teacher I wish to be either considered as a teacher or as nothing at all

पाश्चात्य साहित्य शास्त्री काव्य का प्राण "सौंदर्य" को मानते हैं और Murrey सौन्दर्य-तत्व को नीति पर आधारित मानते हैं—

"Moral nihilism in Literature involves an aesthetic nihilism"

हिन्दी के कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने भी एक स्थान पर लिखा है—

"केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिये।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिये॥"

किन्तु कुछ ऐसे भी कवि और आचार्य हुए हैं जो काव्य या साहित्य में नीति का होना आवश्यक नहीं मानते। इस मत के प्रबल समर्थक अंग्रेजी के प्रसिद्ध कलाकार ऑस्कर वाइल्ड अपने उपन्यास The Picture of Dorian Grey" की भूमिका में लिखते हैं—"साहित्य अथवा कला में नैतिकता अथवा अनैतिकता का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि इन दोनों का क्षेत्र एक दूसरे से सर्वथा पृथक है।" पाश्चात्य समीक्षक क्रोचे और ब्रैडले भी इसी मत के समर्थक थे। कुछ यथार्थवादी समीक्षक भी इस मत की पुष्टि करते हुए साहित्य को केवल समाज का यथार्थ चित्रण करने वाला ही मानते हैं। किन्तु यह मत मान्य नहीं हो सकता। यह ठीक है कि कलाकार अथवा साहित्यकार नैतिकता के बाहरी दबाव से प्रेरित होकर उत्कृष्ट कला अथवा साहित्य सृजन नहीं कर सकता। जब उसका हृदय भावावेग को सम्हाल नहीं पाता तो वह तूलिका स्वर आदि के माध्यम से प्रकट करता है और तब उत्कृष्ट कला का सृजन होता है। लेकिन यहां ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि कला अथवा साहित्य हृदयजनित भावों का स्फुरण होते हुए भी सामाजिक नीति अथवा सदाचार का विरोधी नहीं होता क्योंकि कलाकार या साहित्यकार का व्यक्तित्व समाज के तत्वों से ही संघटित होता है—समाज से पृथक उसके व्यक्तित्व के निर्माण की कल्पना असम्भव है और कला अथवा साहित्य कलाकार अथवा साहित्यकार

के व्यक्तित्व का ही प्रतिफलन तो है। उसकी कृति में कम या अधिक उन सामाजिक नियमों नीतियों एवं सदाचारों का दिग्दर्शन अवश्य मिलेगा जिनके बीच उसका जीवन व्यतीत हुआ है और उसका व्यक्तित्व बना है। इतना अवश्य है कोई साहित्यकार अपने साहित्य में सचेष्ट होकर नीति का वर्णन करता है जबकि अन्य साहित्यकार नीति-वर्णन की ओर उन्मुख नहीं होता अतः उसका साहित्य स्थूल रूप से देखने पर विशुद्ध साहित्य मात्र लगता है किन्तु सूक्ष्म रूप से उसका पर्यवेक्षण करने पर ऐसे साहित्य में भी नीति का दर्शन अवश्य मिल जाता है चाहे वह कला के आवरण में ही क्यों न हो।

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है लेकिन साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब दिखाने वाला दर्पण मात्र ही नहीं है अपितु वह समाज का मार्ग दर्शन कराने वाला प्रकाश स्तम्भ प्रदीप भी है। साहित्यकार फोटोग्राफर की भाँति केवल समाज की तस्वीर खींच कर ही नहीं रह जाता अपितु वह यह भी बताता है कि समाज की एक अच्छी तस्वीर कैसे बन सकती है। यह दूसरा लक्ष्य ही साहित्य को नीति के निकट ला देता है इस तथ्य को ध्यान में रखते ही एक पाश्चात्य विद्वान ने काव्य में नीति को अनिवार्य माना है—

"The essential theam of poetry is moral order

प्लेटो ने नीति से विहीन कला की निन्दा की है और मैथ्यू आर्नल्ड तो काव्य में नीति का होना परमावश्यक मानता था। सुप्रसिद्ध कथाकार टॉलस्टाय तो नीतियुक्त कला के प्रबल समर्थक थे। पाश्चात्य समीक्षक रस्किन भी नीति युक्त कला के बड़े भारी पक्षपाती थे उन्होंने एक स्थान पर स्पष्ट लिखा है— 'कलाएं मानव के लिये उपदेशात्मक होनी चाहिये क्योंकि उपदेश ही उनका चरम लक्ष्य होता है।

किन्तु जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है साहित्य में सर्वत्र स्पष्ट रूप से नीति का वर्णन नहीं मिलता। ऐसा साहित्य प्रचुर मात्रा म उपलब्ध है जो नीति को कला के अवगुण्ठन में निहित रखता है। साहित्य नीतिशास्त्र अथवा धर्म शास्त्र नहीं है जो मात्र नीति अथवा उपदेश का बखान करे अपितु साहित्य तो इन सबको लेकर भी एक पृथक वस्तु है। अतः नीति या उपदेश ऐसी काव्योचित शैली में

अभिव्यक्त किया गया हो जो सरस एवं मार्मिक हो तो ऐसी उक्ति ही काव्य की परिधि में आ सकेगी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि काव्य का लक्ष्य मानव-जीवन का चित्रण करना तो है ही साथ में मानव-जीवन की प्रगति के लिये उसका मार्ग-दर्शन करना भी उसका लक्ष्य है। कुछ काव्यों में यह नीति-तत्व या तो छिपा रहता है या गौण रूप में रहता है लेकिन कुछ काव्यों में नीति तत्व स्पष्ट होता है और ऐसे काव्यों के रचयिताओं का अभिप्रेत ही नीति या उपदेश को काव्य के माध्यम से पहुँचाना होता है। इस प्रकार के काव्य को 'नीतिकाव्य' की संज्ञा दी गई है। जैसा कि ऊपर प्रतिपादित किया जा चुका है कि नीतिकाव्य में नीति का प्रतिपादन होने पर भी उसमें काव्योचित सरसता सरलता और मार्मिकता होनी चाहिए। अतएव नीतिकाव्य में निम्न गुणों का होना आवश्यक है—

१ उसमें किसी नीति या उपदेश का वर्णन हो

२ कथन में विशिष्टता हो अर्थात् नीति या उपदेश इस चमत्कार पूर्ण ढंग से वर्णित किया जावे कि मन पर उसका प्रभाव पड़ सके

३ भाषा सरल स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण हो तथा

४ कथन में स्पष्टता तथा प्रभावोत्पादकता लाने के लिये अनूठे दृष्टान्त या उदाहरणों का प्रयोग होना चाहिये।

हिन्दी में नीतिकाव्य—भारत सदैव से नीति को महत्व प्रदान करने वाला देश रहा है। भारत म नैतिक ज्ञान का इतना सम्मान रहा है नीति ग्रंथों को शास्त्र की संज्ञा दी गई है। अन्य शास्त्र तो किसी विशेष तत्व का ही प्रतिपादन करने के कारण प्रत्येक मनुष्य के लिये उतने लाभप्रद नहीं होते जितना कि नीतिशास्त्र। इसलिये 'शुक्रनीतिसार' के प्रथम अध्याय में साथ ही लिखा है—"नीतिशास्त्र सब मनुष्यों के लिये उपकारी, मर्यादा विधायक धर्म-अर्थ-काम-मूल त्रिवर्ग हेतु मूल एवं मोक्षप्रद है।" यही कारण है कि भारतीय मनीषियों की दृष्टि सदैव नीतिपरक रही है। यहाँ के काव्य में इसीलिये सदा से नीति-तत्व की प्रधानता रही है। भारत का प्रायःप्रत्येक महान् कवि न केवल महान् कलाकार था अपितु आदर्श समाज के निर्माण के लिये मार्गदर्शक

नैतिक नियमों का प्रतिष्ठापक भी था। यहाँ के काव्यों के मूल में तो नीति या उपदेश का सन्निवेश तो होता ही है साथ में नीति का स्पष्ट प्रतिपादन करने वाले स्वतन्त्र नीति काव्य ग्रन्थों की रचना भी प्रचुर परिमाण में हुई है। पाश्चात्य विद्वान Winternitz इसीलिये भारतीय नीतिकाव्य को नीतिकाव्य की दृष्टि से विश्व का सर्वश्रेष्ठ काव्य मानता है—

"In one department of literature, that of the aphorism (gnomic poetry) the Indians have attained a mastery which has never been gained by any other nation."

संस्कृत का नीतिकाव्य इस दृष्टि से विशेष समृद्ध है। संस्कृत में नीति सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें से प्रमुख ग्रन्थों के नाम इस प्रकार हैं (१) शुक्र-नीति, (२) चाणक्य नीति (३) नीति शतक (४) लोकोक्ति मुक्तावली (५) उपदेश शतक (६) सूक्ति संग्रह (७) नीति मञ्जरी (८) नीतिवाक्यामृत (९) नीतिसार (१०) नीतिप्रकाश (११) नीति चन्द्रिका (१२) नीति रत्नाकर, (१३) दृष्टान्त शतक (१४) नीति प्रदीप (१५) नीतिमाला (१६) नीति कमलाकर, (१७) नीतिप्रकाशिका (१८) नीति रत्नाकर (१९) नीति विलास (२) नीति विवेक आदि।

उपर्युक्त ग्रन्थों में कुछ तो विशुद्ध नीति के ग्रन्थ हैं और कुछ अन्य काव्यत्व से युक्त हैं। संस्कृत में विपुल परिमाण में अन्योक्तियों की रचना भी हुई है जिनमें नीति और कविता का सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है। सोमनाथ वीरेश्वर विजयपण्डित मधुसूदन नीलकण्ठ जगन्नाथ गणपति आदि कवियों ने अपने अपने शतकों में अन्योक्तियों का संग्रह किया है। इनके अतिरिक्त संस्कृत में सुभाषितों की रचना भी हुई है। "सुभाषित रत्नाकर 'सुभाषितावली' 'सुभाषित कौस्तुभ' 'सुभाषित त्रिशती 'कवीन्द्र वचन समुच्चय' आदि ग्रन्थों में सुभाषितों का संग्रह हुआ है।

यह ठीक है कि संस्कृत के समान हिन्दी में नीतिकाव्य-ग्रन्थों की रचना नहीं है फिर भी हिन्दी नीति काव्य परिमाण और गुण की दृष्टि से नगण्य नहीं है। चन्दबरदायी जगनिक कबीर जायसी सूर, तुलसी केशव बिहारी, भारतेन्दु, प्रसाद पंत, मैथिलीशरण गुप्त आदि ऐसे अनेक कवि हुए हैं जिनके

काव्यों में नीतिकाव्य के सुन्दर उदाहरण स्थान-स्थान पर मिलते हैं। कुछ ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने नीति पर स्वतन्त्र रूप से भी लिखा है। हिन्दी नीतिकाव्य की कृतियों को चार कोटियों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) सतसई रूप में
(२) शतक रूप में
(३) नीति विषयक कविताओं के अन्य संग्रहों के रूप में और
(४) अन्य विषय से सम्बन्धित मुक्तकों के संग्रह में संग्रहीत नीति की कविताएं।

१—सतसई रूप में—सतसई दो प्रकार की हैं एक प्रकार की वे सतसई हैं जिनमें नीति सम्बन्धी छन्दों को ही संग्रहीत किया गया है। इनमें से प्रमुख सतसइयों के नाम इस प्रकार हैं—

(१) रहीम सतसई, (२) तुलसी सतसई, (३) वृन्द सतसई (४) विरस नीति सतसई (५) बुधिचार सतसई आदि।

दूसरे प्रकार में वे सतसइयां आती हैं जिनमें अन्य विषय के छन्दों के साथ नीति के छन्द भी पर्याप्त मात्रा में संग्रहीत हैं। इस प्रकार की सतसइयों में कुछ प्रमुख नाम इस प्रकार हैं—

(१) बिहारी सतसई, (२) मतिराम सतसई, (३) कृष्णपति सतसई, (४) भूपति सतसई (५) चन्दन सतसई, (६) राम सतसई, (७) विक्रम सतसई (८) हरिऔध सतसई (९) कल्ल सतसई (१०) ब्रजसतसई (११) स्वदेश सतसई, (१२) वीर सतसई आदि।

२—शतक के रूप में—शतकों में भी नीति सम्बन्धी छन्दों का संग्रह किया गया है। कुछ प्रमुख शतकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) सज्जन गुण शतक (२) नृपनीति शतक, (३) उपदेश शतक (४) लोकोक्ति शतक, (५) सभ्य नीति शतक, (६) भूधर शतक (७) नीति शतक (८) अन्योक्ति शतक आदि।

३—नीति विषयक कविताओं के अन्य संग्रहों के रूप में—सतसई तथा शतक के अतिरिक्त कवियों ने अपनी नीति सम्बन्धी कविताओं को अन्य रूप में भी संग्रहीत किया है। इनमें से कुछ कवियों के नाम इस प्रकार हैं—

(१) प्रबोध बावनी (२) नसीहत नामा (३) सीख पचीसी (४) दान बावनी (५) गिरिधर कृत कुण्डलियाँ (६) अन्योक्ति मंजूषा (७) सीख मंजरी (८) नीति संग्रह, (९) नीति अष्टक (१०) नीति मुक्तावली (११) नीति सुधा मन्दाकिनी (१२) नीति मुक्तावली (१३) हित वृन्दावनदास कृत कुण्डलियाँ (१४) अमिरस पच्चीसिका (१५) सुनीति रत्नाकर (१६) उत्तम नीति चन्द्रिका (१७) सुनीति पद्य प्रकाश (१८) अन्योक्ति कल्पद्रुम (१९) दीनजी कृत अन्योक्ति मंजूषा (२०) अन्योक्ति प्रकाश आदि ।

४—अन्य विषयों से सम्बन्धित मुक्तकों के संग्रह में संग्रहीत नीति की कविताएँ—कुछ ऐसे भी संग्रह हैं जिनमें अन्य विषय से सम्बन्धित छन्दों के साथ नीति सम्बन्धी छन्द भी संग्रहीत हैं। प्रायः प्रत्येक श्रेष्ठ कवि के कविता संग्रह में कुछ न कुछ नीति विषयक कविताएं भी मिल ही जाती हैं। फिर भी कुछ मुक्तक संग्रहों के नाम उल्लेखनीय हैं—(१) पाठक कृत 'ज्ञान सरोवर' (२) दयाबाई रचित 'दयाबोध' (३) रसनिधि कृत 'रतन हजारा' (४) बनारसी दास रचित 'ज्ञानबावनी' (५) दुलारेलाल कृत 'दुलारे दोहावली' (६) हरिऔध कृत 'दिव्य दोहावली', (७) मैथिलीशरण गुप्त 'भारतभारती' आदि ।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि हिन्दी का नीति काव्य परिमाण और श्रेष्ठता की दृष्टि से संस्कृत को छोड़कर किसी भी भाषा के नीतिकाव्य से न्यून नहीं है।

रहीम का नीतिकाव्य—वैसे तो रहीम ने प्रेम सौन्दर्य नायिका भेद आदि पर शृङ्गारिक कविताओं की रचना भी खूब की है लेकिन नीतिकाव्य के प्रणेता के रूप में उनका हिन्दी साहित्य में विशेष स्थान है। नीति काव्य कार के रूप में वे हिन्दी जनता में विशेष लोकप्रिय हैं। रहीम की 'सतसई' या दोहावली में उनके नीतिपरक दोहे शिक्षित और अशिक्षित दोनों ही प्रकार के लोगों में कहावतों के रूप में प्रयुक्त होते हैं। उनकी इस लोकप्रियता का कारण है उनके नीतिकाव्य का सरल सरस और प्रभावोत्पादक होना। यहाँ रहीम के नीतिकाव्य का विवेचन करना अपेक्षित होगा।

पहले बताया ही जा चुका है कि सफल नीतिकाव्य में निम्न चार गुणों का होना आवश्यक है—

(१) नीतिकाव्य में किसी नीति या उपदेश का वर्णन होना चाहिये

(२) नीति या उपदेश के कथन में ऐसी विशिष्टता होनी चाहिये ता
प्रतिपाद्य नीति या उपदेश का मन पर प्रभाव पड़ सके

(३) भाषा सरल स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण होनी चाहिये तथा —

(४) कथन में स्पष्टता और प्रभावोत्पादकता लाने के लिये ममूर्त औ
दृष्टान्त या उदाहरणों का नियोजन होना चाहिये ।

रहीम के नीतिकाव्य में इन गुणों का समावेश अत्यन्त सार्थक और सुन्
रूप में हुआ है ।

(१) रहीम ने दीर्घजीवी होकर जीवन के बड़े-बड़े उतार-चढ़ावों
देखा था । चार वर्ष की आयु में पिता के साथ अकबर के राज्य से निर्वासि
हुए तथा अल्पायु में ही पिता की मृत्यु का असह्य दुःख सहन करना पड़ा
पुनः अपनी प्रखर प्रतिभा और योग्यता से अकबर के मन को जीता और क्र
मशः उन्नति-पथ पर अग्रसर होकर एक दिन अकबरी दरबार के नवरत्नों
से एक हो गये । वे अकबरी राज्य के सेनापति भी बनाये गये तथा कई यु
में विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में अकबर ने अनेक जागीरें उपहार स्वरू
दी तथा कई प्रान्तों के सूबेदार भी बने । अकबर इनके पराक्रम प्रतिभा
प्रसन्न होकर कई बार अपार धनराशि भी भेंट कर चुका था । पारिवारि
दृष्टि से भी ये युवावस्था में विशेष सुखी रहे । माहबानू जैसी सुन्दर औ
सुशील पत्नी के साथ इनके ३ पुत्र और दो पुत्रियाँ इनके पारिवारिक सु
और वैभव के प्रतीक थे । लेकिन इस सम्मान सुख और वैभव के उत्कर्ष
साथ-साथ जीवन के अन्तिम दिनों में अपार विपत्तियों को भी सहन करना
पड़ा । चार चार पुत्रों की मृत्यु तथा दोनों पुत्रियों का असमय ही विधवा
जाना पारिवारिक दुःख की चरम सीमा थी । राजद्रोह का गम्भीर आरो
लगाकर अकबर के बाद के शासक जहाँगीर ने इनसे सारी जागीरें छीन ली
कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन में बड़े-बड़े उतार चढ़ाव सुख-दुःख रही
ने देखे । अतः जीवन की वास्तविकता से उन्हें निकट का परिचय हो गया था
राजकार्य से उन्हें दूर-दूर प्रदेशों तक जाना पड़ता था । अतः दरबार में र

वर्गों के व्यक्तियों से सम्पर्क होने के कारण उनके अनुभव का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया था। यही कारण है कि वे अपने दोहों में जीवन को अधिकाधिक उन्नत बनाने के लिये सुन्दर नीति का प्रतिपादन करने में समर्थ हो सकें। जीवन की गहरी संवेदना उनके पास थी और विशाल अनुभव भी था अतः उनके नीति कथन लोगों पर अधिक प्रभाव डाल सके। और इसीलिए उनके दोहों में मानव-जीवन के विविध पक्षों का उद्घाटन हुआ है।

(२) कविवर रहीम के नीतिकाव्य की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि उनके नीति या उपदेश के कथन शुष्क नहीं हैं अपितु उनमें ऐसा वैशिष्ट्य है जो पढ़ने वाले और सुनने वाले पर वांछित प्रभाव डालता है। रहीम ने अपने जीवन के अनुभवों को ऐसे मार्मिक ढंग से दोहों में रखा है कि पाठक और श्रोता अभिभूत हो जाते हैं। प्रायः यह देखने में आता है कि जब मनुष्य विपत्ति में होता है तो उसके सम्बन्धी भी मुँह फेर लेते हैं और ऐसे बुरे दिनों में जिनको सहायता दी थी वे भी कष्ट देने वाले हो जाते हैं। रहीम ने जीवन के इसी सहज सत्य को निम्न दोहे में कितने सुन्दर ढंग से कहा है—

जिहि अंचल दीपक दुरयो हन्यो सो ताही गात।
रहिमन असमय के परे मित्र शत्रु ह्वै जात॥

धन ही मनुष्य को मान देता है विपत्ति में सहायक होता है। यदि पास में धन नहीं है तो अपने भी कष्ट देने लगते हैं। रहीम ने नीति की इस बात को ऐसे ढङ्ग से कहा है कि उसमें एक विशेष चारुता और मार्मिकता आ गई है—

"जब लगि वित्त न आपुने तब लगि मित्र न कोय।
रहिमन अम्बुज अम्बु बिनु रवि नाहिन हित होय॥"

सच ही है बिना पैसे के कौन किसका साथ देता है— कमल जब पानी से पृथक हो जाता है तो उसका हित-चिन्तक सूर्य भी उसे दग्ध करने लगता है। रहीम के प्रायः सभी दोहे कथन की इसी मार्मिकता और विशिष्टता के

२

कारण जनता में अत्यन्त लोकप्रिय और साहित्य की अनुपम निधि बन सके हैं।

(३) रहीम के दोहों की भाषा सर्वत्र सरल सुबोध और स्वाभाविक है। उनके दोहों में बिहारी की भांति शब्दों की तोड़-मरोड़ और भाषा का कृत्रिम रूप देखने को नहीं मिलता। भाषा की सरलता और सादगी के कारण ही रहीम के दोहे निरक्षर मनुष्यों की जबान पर भी चढ़ गये। रहीम की लोकप्रियता का एक बहुत बड़ा कारण उनकी भाषा का अकृत्रिम और सरल होना भी है।

(४) अपने दोहों में रहीम ने न केवल स्वानुभूति का चित्रण किया न केवल सरल व सादी भाषा को अपनाया अपितु सुन्दर व सार्थक दृष्टान्तों की आयोजना करके उन्हें विशेष प्रभावोत्पादक भी बना दिया है। "रहीम रत्नावली" की भूमिका में डा० श्यामसुन्दरदास ने नीति-काव्य के लिये अनूठे दृष्टान्त का नियोजन होना आवश्यक माना है। कुछ दोहों को छोड़कर सर्वत्र रहीम ने ऐसे सुन्दर और सार्थक दृष्टान्तों और उपमाओं का विधान किया है कि देखते ही बनता है। दृष्टान्तों और उपमाओं के चुनाव में उनकी मौलिक सूझबूझ को दाद देनी पड़ती है। मनुष्य को सोच समझ कर ही बात करनी चाहिये और व्यवहार करना चाहिये क्योंकि किसी कारणवश यदि बात बिगड़ जाती है तो फिर उसका बनाना सम्भव नहीं हो पाता। जैसे कि यदि एक बार दूध फट गया तो फिर लाख कोशिश करने पर भी उसे मथ कर मक्खन नहीं निकाला जा सकता। रहीम ने इस कथन की पुष्टि में सचमुच बड़े ही सुन्दर और सार्थक दृष्टान्त की आयोजना की है—

> "बिगरी बात बनै नहीं लाख करो किन कोय।
> रहिमन फाटे दूध को मथे न माखन होय॥"

अनूठे दृष्टान्त प्रयोग के और भी कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

(१) "रहिमन लाख भली करो, अगुनो अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियतहूँ साँप सहज धरि खाय॥"

(२) "रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो चटकाय।
टूटे से फिर ना मिले मिले गाँठ पड़ जाय॥"

(३) "रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिये डारि।
जहाँ काम आवे सुई, कहा करे तरवारि॥"

(४) "रहिमन ओछे नरन सों बैर भलो न प्रीति।
काटे चाटे स्वान के दोऊ भाँति विपरीति॥"

(५) "बसि कुसंग चाहत कुसल, यह रहीम जिय सोस।
महिमा घटी समुद्र की रावण बसे परोस॥"

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रहीम के दोहे हिन्दी की अमूल्य निधि हैं। अपने विशिष्ट गुणों के कारण उनके दोहे हिन्दी नीतिकाव्य की सबसे सुन्दर देन माने जा सकते हैं। यही कारण है कि रहीम हिन्दी के नीतिकार कवियों में सबसे अधिक लोकप्रिय और यशस्वी हैं।

हिन्दी सतसई-परम्परा में रहीम का स्थान

सतसई का महत्त्व—भारतीय काव्य-शास्त्रियों ने रचना की दृष्टि से काव्य के दो प्रमुख भेद किये हैं— १—प्रबंध काव्य और २—मुक्तक काव्य। प्रबन्ध काव्य में किसी कथा का क्रमबद्ध रूप से वर्णन होता है जबकि मुक्तक काव्य में किसी कथा का बन्धन नहीं होता। मुक्तक काव्य का प्रत्येक छन्द स्वतन्त्र होता है उसका सम्बन्ध अन्य छन्दों से नहीं होता। मुक्तक काव्य की रचना प्रबंध काव्य की अपेक्षा अधिक विपुल परिमाण में हुई है। और इसका कारण भी स्पष्ट है। मुक्तक काव्य के प्रणेता और पाठक दोनों को सुविधा रहती है। कवि सरलता से बिना अधिक श्रम किये मुक्तक काव्य की रचना कर लेता है और पाठक भी बिना अधिक समय नष्ट किये मुक्तक काव्य का रसास्वादन कर लेता है। मुक्तक काव्य में एक छन्द दूसरे छन्द से सम्बद्ध नहीं होते—प्रत्येक छन्द भाव और विषय की दृष्टि से अन्य छन्दों से स्वतन्त्र होता है। इसीलिये कवि मुक्तक रूप में रचे इन छन्दों का संग्रह एक स्थान पर करते हैं। इन छन्दों को हजार, सात सौ, सौ पचास पच्चीस आदि की संख्या में संगृहीत कर दिया जाता है। और इस प्रकार इन संग्रहों के नाम हजारा सतसई शतक पचासा पच्चीसी आदि हो जाते हैं। इस प्रकार 'सतसई' नाम भी मुक्तक रूप से रचे गये छन्दों के संकलन के लिये प्रयोग होता

है। सतसई संस्कृत शब्द 'सप्तशती' से बना है जिसका अर्थ है "सात सौ" अतएव जिस काव्य मे सात सौ छन्दों का सकलन हो उसे सतसई कहते है। 'सतसई' मे दो पंक्तियों वाले छन्दों—विशेषकर दोहों—का संकलन रहता है। मुक्तक काव्य में सतसइयों की रचना विपुल परिमाण में हुई है और हिन्दी में तो कदाचित सतसइयों के रूप में ही मुक्तकों का सबसे अधिक संग्रह किया गया है। 'सतसई' के महत्व के सम्बन्ध में Encyclopedia of Brittanica" में लिखा है—

'The Satsai is perhaps the most celebrated work of poetic art as distinguished bron narrative and simpler styles Each conplet is dependent and complect in itself and is a triwmp of skill in comparison of language falici ty of description and rhetorical arti felco."

अर्थात्—"विवरणात्मक तथा अन्य सरल शैलियों को छोड़कर काव्य में 'सतसई' सम्भवत सब श्रेष्ठ रचना है। इसका प्रत्येक दोहा स्वतन्त्र तथा स्वयं में पूर्ण होता है और भाषा संहृति वर्णन-प्रौढ़ता तथा अलकार चातुर्य में अत्यन्त कौशल लक्षित होता है।"

हिन्दी-सतसई परम्परा—भारतीय साहित्य में सर्वप्रथम सतसई के रूप में रचना संस्कृत की 'दुर्गासप्तशती' है। दुर्गासप्तशती' एक धार्मिक कृति है जो 'मार्कण्डेय पुराण' का एक भाग है। इसमें सात सौ श्लोक है। चूंकि यह धार्मिक विषय को लेकर लिखी गई है अत इसका प्रचार-प्रसार धार्मिक दृष्टि से ही हुआ—साहित्यिक दृष्टि से इसका महत्व विशेष नही रहा। साहित्यिक दृष्टि से सर्वप्रथम महत्व की सतसई हाल कृत "गाथा सप्तशती" मानी जाती है। यह प्राकृत-भाषा के महाकवि हाल द्वारा रची गई है। संस्कृत के कवि गोवर्धनाचार्य ने इसी के अनुकरण पर 'आर्यसप्तशती' की रचना की। हिन्दी के सतसई कारों पर इन दोनों सतसइयों का बड़ा प्रभाव पड़ा है। इन दोनों सतसइयों के अतिरिक्त हिन्दी के सतसईकारों पर भर्तृहरि के "नीतिशतक",

"शृङ्गार शतक', और वैराग्यशतक" अमरुक के 'अमरुक शतक' विल्हण कृत 'चौर पंचाशिका' आदि काव्य कृतियों के भी पर्याप्त प्रभाव पड़े हैं। संस्कृत के इन मुक्तक काव्यों के प्रतिपाद्य शृंगार तथा नीति—ये दो विषय ही प्रमुख रहे। हिन्दी की सतसइयों के मुख्य विषय शृंगार और नीति ही रहे। हिन्दी की दोनों प्रारम्भिक सतसई—'तुलसी सतसई' और 'रहीम सतसई' नीतिविषयक ही हैं तथा इसके बाद 'बिहारी सतसई' का मुख्य विषय शृंगार है यद्यपि उसमें कुछ सुन्दर नीतिविषयक दोहे भी संग्रहीत हैं। बिहारी सतसई को असाधारण प्रतिष्ठा मिली और उसकी प्रसिद्धि से प्रभावित होकर अनेक हिन्दी कवियों ने अपनी-अपनी सतसइयों की रचना कर डाली। जैसा कि बताया कि मुख्यतः इन सतसइयों के विषय शृंगार और नीति ही रहे। जैसे रहीम सतसई और 'तुलसी सतसई' के पश्चात् की 'वृन्द सतसई' आदि नीति विषयक सतसइयों की कोटि में आती है और 'बिहारी सतसई' के पश्चात् की 'मतिराम सतसई' विक्रमसतसई' आदि शृंगार विषयक सतसइयों की कोटि में आती हैं। लेकिन आधुनिक काल में देश प्रेम, समाज सुधार आदि विविध विषयों पर भी सतसइयाँ मिलती हैं।

"बिहारी सतसई" के पश्चात् लिखी गई प्रमुख सतसइयों के नाम इस प्रकार हैं—(१) रसनिधि सतसई, (२) मतिराम सतसई (३) वृन्द सतसई, (४) कुलपति सतसई (५) भूपति सतसई, (६) चन्दन सतसई (७) दयाराम सतसई (८) राम सतसई, (९) विक्रम सतसई (१०) बुधजन सतसई, (११) हरिऔध सतसई (१२) ब्रज सतसई (१३) स्वदेश सतसई, (१४) करुण सतसई (१५) वीर सतसई आदि।

कुछ आलोचकों का यह कथन है कि वियोगी हरि की 'वीर सतसई' हिन्दी सतसई-परम्परा की अन्तिम कड़ी है। इसके बाद सतसई लिखने का क्रम टूट गया। यदि सतसई लिखी भी गई है तो एक दो ही। उन्होंने सतसई-परम्परा के रुक जाने के अनेक कारण भी गिना दिये हैं। लेकिन प्रबुद्ध आलोचकों का यह कथन अज्ञानता का परिचायक है। सतसई की परम्परा रुकी नहीं है—अनवरत रूप से चल रही है। हाँ यह बात दूसरी है कि बिहारी के बाद

रीतिकाल में जिस तेजी से सतसइयाँ लिखी गई उसमें मंद गति अवश्य आ गई है। वैसे सतसई की परम्परा आज तक जीवित है और प्रत्येक वर्ष एक-दो सतसई का प्रकाशन होता रहता है। 'वीर सतसई' के पश्चात् तो अनेक सतसइयाँ अब तक छप चुकी हैं जिनमें से कुछ मुख्य सतसइयों के नाम नीचे दिये जाते हैं—

(१) परमानंदसिंह 'निर्मम' कृत "किसान सतसई (२) रोहनसिंह की 'रोहन सतसई" (३) "टेकचन्द सतसई" (४) शिवरत्न शुक्ल 'सिरस' कृत "सिरस नीति सतसई" (५) अम्बिकादत्त रचित "सुकवि सतसई" (६) अमनसिंह तोमर की 'किसान सतसई' (७) रामस्वरूप मिश्र की 'सुविचार सतसई" (८) राजेश कृत "राजेश सतसई आदि। इनके अतिरिक्त अभी एक-दो वर्ष पूर्व राजेन्द्र शर्मा द्वारा रचित 'ज्ञान सतसई' तथा स्वरूप कृत विभूति सतसई का प्रकाशन हो चुका है। तरुण आलोचक डा० सुरेशचन्द्र गुप्त की "आधुनिक सतसई"अभी अप्रकाशित है। अतः यह स्पष्ट है कि रहीम और तुलसी से लेकर आज तक हिन्दी में सतसई की परम्परा अक्षुण्ण रही है।

रहीम सतसई का स्थान—हिन्दी की सतसई परम्परा में सबसे अधिक उज्ज्वल रत्न यदि खोजा जाये तो निश्चित रूप से वे 'बिहारी सतसई' के रूप में ही होगा। 'बिहारी सतसई' निर्विवाद रूप से हिन्दी की सतसइयों में सबसे अधिक लोकप्रिय और श्रेष्ठ है। बिहारी सतसई" के बाद अवश्य ही कुछ सतसइयों का महत्व है। ऐसी सतसइयों में 'रहीम सतसई का स्थान अग्रणी है। 'रहीम सतसई' अभी अपूर्ण रूप में ही उपलब्ध हो चुकी है। लेकिन अपूर्ण रूप में तो सही इसका महत्व है—इसमें सन्देह नहीं। चूँकि यह "बिहारी सतसई" से पूर्व की सतसई है अतः इस दृष्टि से इसका महत्व है ही। अन्य दृष्टियों से भी हिन्दी सतसई-साहित्य में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। सतसई परम्परा में 'रहीम सतसई का महत्व दर्शाने वाले निम्न तथ्य ध्यातव्य हैं—

(१) "रहीम सतसई को हिन्दी सतसई-साहित्य की सर्वप्रथम कृति मानी जा सकती है। ऐसा मानने के कारण यह है कि 'रहीम सतसई' से पूर्व अन्य किसी हिन्दी कवि की सतसई उपलब्ध नहीं होती। उनके समकालीन

कवि तुलसीदास की 'तुलसी सतसई' अवश्य प्राप्त होती है किन्तु उसके सम्ब
में यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि वह 'रहीम सतसई' से पूर्व
ही रची है। 'तुलसी सतसई' के बारे में तो यह विवाद भी प्रचलित है
यह तुलसी कृत नहीं है। पं० रामगुलाम द्विवेदी तथा महामहोपाध्याय सुधाक
द्विवेदी के अनुसार तो 'तुलसी सतसई' गोस्वामी तुलसीदास रचित न हो
मारोपुर के किसी तुलसी कायस्थ की रचना है। कुछ विद्वान कहते हैं
'तुलसी सतसई' को तुलसीकृत न मानना तर्क संगत नहीं है। यदि 'दोहाव
तुलसीकृत है तो 'सतसई' भी तुलसीकृत है क्योंकि 'सतसई' में 'दोहावली'
लगभग दो सौ दोहे मिलते हैं। किन्तु केवल इतना कहने से ही सम्पूर्ण सत
को तुलसीकृत मानने का ठोस प्रमाण नहीं जुट पाता। इस सम्बन्ध में तुलसी
साहित्य के मर्मज्ञ डा० माताप्रसाद गुप्त का कथन विशेष रूप से दृष्टव्य है—
'सतसई' का जो एक मुख्यांश 'दोहावली' में मिलता है। इस अंश के प्राम
णिक होने में संदेह नहीं है। 'सतसई' के उस अंश की शैली तथा विचारधा
के सम्बन्ध में ही जो 'दोहावली' में नहीं मिलता यह बात कही जा सकती
कि उसका अधिकांश निश्चित रूप से तुलसीदास की रचना नहीं है "

उदाहरण के लिये डा० गुप्त ने 'सतसई' के उन चार दोहों को उद्
किया है जो 'दोहावली' में नहीं मिलते। इन दोहों के द्वारा गुप्तजी ने
सिद्ध किया है कि वे कवि कृत नहीं हो सकते क्योंकि उनमें ऐसे शब्दों तथ
रूपों का प्रयोग प्रचुरता के साथ हुआ है जो कवि की रचनाओं में अन्य
नहीं मिलते।

फिर जिस दोहे में ग्रन्थ का रचना काल दिया हुआ है, वह प्रक्षिप्त
क्योंकि जिस प्रणाली पर गणना करने पर कवि की और तिथियाँ शुद्ध उतरत
हैं, उस प्रणाली पर उस दोहे में दी हुई तिथि ठीक नहीं उतरती। इसीलि
'सतसई' की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में भी सन्देह किया जाता है यह संदे
सर्वथा तर्क संगत है।

इसके साथ ही 'सतसई' की अप्रामाणिकता के सम्बन्ध में डा० गुप्त
आगे भी लिखा है—'सतसई और दोहावली के मूल में कवि के दोहों
एक ऐसा लघु संग्रह था जिसको देहावसान के बाद अलग अलग ढंग

देकर इस प्रकार के दो एक दूसरे से किंचित् भिन्न संग्रहों के रूप में उपस्थित किया गया।   विषय-निर्वाह तथा शैली के आधार पर भी ऊपर विचार करते हुए ग्रन्थ के उक्त अंश की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में सन्देह प्रकट किया जा चुका है जो कि 'दोहावली' में नहीं मिलता है। इसलिये यह असम्भव नहीं है कि कवि के देहावसान के अनन्तर किसी सतसई के अनुकरण पर कवि के किसी भक्त ने उसके कुछ दोहों के साथ साथ स्वरचित कुछ दोहे मिलाकर प्रस्तुत संग्रह तैयार कर दिया हो और उपर्युक्त तिथि सम्बन्धी दोहा भी रचकर उसमें रख दिया हो।

— 'तुलसीदास

इस प्रकार यदि 'तुलसी सतसई' प्रामाणिक नहीं है तो 'रहीम सतसई' ही हिन्दी की प्रथम 'सतसई' ठहरती है। और यदि 'तुलसी सतसई' को तुलसीकृत मान भी लें तो भी यह सिद्ध नहीं होता कि तुलसी ने उसे रहीम की सतसई से पहले ही रच लिया होगा। बहुत सम्भव है कि तुलसी ने जिस प्रकार रहीम द्वारा आविष्कृत 'बरवै' छन्द पर मुग्ध होकर "बरवै रामायण" की रचना कर डाली उसी प्रकार रहीम की सतसई से आकृष्ट होकर अपनी सतसई का निर्माण भी कर लिया हो। सूर के गीतिकाव्य से आकृष्ट होकर जो कवि "कृष्णगीतावली और "गीतावली' की रचना कर सकता हो उससे ऐसी आशा करना असम्भव नहीं। तुलसी की वृत्ति प्रबन्ध काव्यों की रचना में अधिक रमती थी—'सतसई' को छोड़कर उनके प्रत्येक काव्य में प्रबन्ध के प्रति कवि के मोह को देखा जा सकता है। जबकि रहीम प्रारम्भ से ही मुक्तक काव्य रचना की ओर प्रवृत्त थे। उनके अत्यधिक व्यस्त जीवन में मुक्तक काव्य रचना की ही अधिक गुंजाइश थी। अतः यह बहुत सम्भव है कि प्रबन्ध काव्य के प्रेमी तुलसी ने रहीम की मुक्तक काव्य रचना से प्रभावित होकर 'दोहावली' की रचना कर डाली हो और बाद में कुछ दोहे 'दोहावली' और 'मानस' से लेकर और कुछ दोहे और रच कर 'सतसई' में संकलित कर दिये हों। अथवा तुलसी के किसी भक्त कवि ने तुलसी के कुछ दोहों को लेकर तथा स्वरचित दोहों को मिलाकर 'सतसई' के रूप में सात सौ की संख्या पूरी कर दी हो। कुछ भी हो तथ्य और अनुमान से यही निष्कर्ष निकलता है

कि रहीम की सतसई हिन्दी की पहली सतसई है और इस प्रकार वे हिन्दी के प्रथम सतसईकार हैं।

(२) 'रहीम सतसई' के दोहे लोकप्रियता की दृष्टि से सबसे ऊँचा स्थान पाने के अधिकारी हैं। उनके दोहे साक्षर और निरक्षर जनता में अत्यधिक प्रचलित हैं। हिन्दी में अन्य किसी कवि के दोहे इतने लोकप्रिय नहीं हुए जितने रहीम के। यह ठीक है कि 'बिहारी सतसई' को सबसे अधिक प्रसिद्धि मिली किन्तु उसकी प्रसिद्धि और प्रचार साहित्यिक और शिक्षित समुदाय तक सीमित रहा। रहीम एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने जीवन के विविध अनुभवों को उपदेशों को इतने सुन्दर सरस और मार्मिक ढङ्ग से दोहों में रखा कि साधारण से साधारण व्यक्ति उससे प्रभावित हुआ। इसीलिये यदि 'बिहारी सतसई' साहित्यिक जगत में सर्वाधिक प्रसिद्ध है तो 'रहीम सतसई' सामान्य जनता में सर्वाधिक लोकप्रिय है। सतसई के दोहों के कारण ही रहीम जन-जन की वाणी का हार बने हुए हैं। कबीर सूर तुलसी के समान ही रहीम हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवियों में हैं।

(३) 'रहीम सतसई' में जीवन के विविध और दीर्घ अनुभवों और गहरी संवेदना के प्रमाण मिलते हैं वे अन्य सतसइयों में उस परिमाण उपलब्ध नहीं हैं। रहीम अन्य सतसईकारों की भाँति केवल कल्पना के लोक में विचरण करने वाले नहीं थे अपितु जीवन की यथार्थता से उनका प्रत्यक्ष निकट का परिचय था। स्वानुभूति के इसी प्रकाशन के कारण उनके दोहे साधारण जनता के हृदय पर भी अपना पूर्ण प्रभाव डालने में सफल हुए हैं।

(४) रहीम की सतसई हिन्दी नीतिकाव्य की प्रथम श्रेष्ठ कृति कही जा सकती है। यद्यपि रहीम से पहले कबीर आदि संत कवियों ने नीति से सम्बन्धित कविता कही है। किन्तु विशुद्ध नीतिकाव्य की कृतियों में रहीम की सतसई ही प्रथम है क्योंकि कबीर की सभी साखियाँ विशुद्ध नीतिकाव्य से सम्बन्धित नहीं हैं। तुलसी आदि के काव्य में यत्र-तत्र नीति सम्बन्धी कथन मिल जाते हैं। बिहारी की सतसई यदि शृंगार विषयक सतसइयों में सबसे पहली और परवर्ती कवियों के प्रेरणास्रोत रही है तो रहीम की 'सतसई' भी

नीति विषयक सतसइयों में सबसे पहली और परवर्ती कवियों की प्रेरक रही है। नीति विषयक 'वृन्द सतसई' 'विरस नीति सतसई' आदि पर रहीम सतसई का पर्याप्त प्रभाव लक्षित होता है। बिहारी भी रहीम की सतसई से अप्रभावित न रह सके। शृंगार में गहरी अभिरुचि होने पर भी उन्होंने इसीलिये नीति के दोहे भी लिखे हैं। उनके कुछ दोहों पर तो रहीम के दोहों की स्पष्ट छाया है।

(२) 'रहीम सतसई' भाषा की दृष्टि से भी अप्रतिम है। इसमें भाषा का जैसा सीधा और सरल रूप मिलता है वैसा अन्य सतसइयों में दुर्लभ है। बिहारी की सतसई में भी भाषा पुष्ट अवश्य है लेकिन उसमें सरलता का अभाव मिलता है। उसमें सरलता के स्थान पर सजावट और शब्दों की तोड़ मरोड़ है। भाषा की इसी आडम्बर शून्यता सादगी और सरलता के कारण ही रहीम के दोहे जनता में इतने प्रचलित हो सके।

'बिहारी सतसई' भाषा में पुष्टता तो है किन्तु वह सरलता तथा सादगी नहीं जो 'रहीम सतसई' में है। मतिराम की सतसई में भाषा की सरलता भी है और पुष्टता भी लेकिन उनके दोहे जनता में इतने प्रचलित न हो सके। वृन्द सतसई में भाषागत सरलता और पुष्टता दोनों विद्यमान हैं और उसके दोहे जनता में लोकप्रिय भी हुए किन्तु उन दोहों मे जीवन के उन विविध और दीर्घ अनुभवों का अभाव प्राय है जो रहीम के दोहों की प्रमुख विशेषता है। इसीलिए पं० रामचन्द्र शुक्ल ने सत्य ही लिखा है—"रहीम के दोहे वृन्द और गिरधर के पद्यों के समान कोरी नीति के पद्य नहीं हैं। उनमें मार्मिकता है उनके भीतर एक सच्चा हृदय झाँक रहा है।"

इस प्रकार स्पष्ट ही कहा जा सकता है कि 'रहीम सतसई' का हिन्दी की सतसई-परम्परा में विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है और सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रथम सतसईकार होने के नाते रहीम हिन्दी साहित्य में गौरव पीन पद पर प्रतिष्ठित हैं।

रहीम के दोहों में अनुभूति

काव्य के स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों में विभिन्न मत प्रचलित हैं। लेकिन यह तो प्राय सभी विद्वान मानते हैं कि काव्य में कुछ ऐसा होना चाहिये जो मानव-जीवन को उच्च बनाने की प्रेरणा दे सके। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं अपितु प्रदीप भी है। साहित्य के द्वारा समाज को मार्ग-दर्शन प्राप्त होता है। अत काव्य में समाज का मार्ग-दर्शन करने वाली नीति का बहुत महत्त्व है। लेकिन काव्य में शुष्क नीति का कथन सदा हेय माना भी हो सकता है। अत काव्य में नीति के कथन के लिये आवश्यक है कि वह नीति कवि के व्यक्तिगत अनुभव और संवेदना का परिणाम हो। पाश्चात्य विद्वान हडसन ने काव्य के सम्बन्ध में लिखा है—"It is fundamentally an expression of life through the medium of language" अर्थात्—काव्य मूलत भाषा के माध्यम से जीवन की अभिव्यक्ति है। अतएव जिस कवि ने जीवन के उतार-चढ़ाव जितने अधिक देखे होंगे तथा जीवन के विविध पक्षों का जितना अधिक अनुभव किया होगा वह उतना ही अधिक सफल और श्रेष्ठ कवि होगा। जो कविता कवि की स्वानुभूति के जितनी अधिक निकट होगी वह उतनी ही अधिक पाठकों पर प्रभाव डालने में समर्थ होगी। रहीम की कविता इसलिये इतनी अधिक लोकप्रिय एवं श्रेष्ठ समझी गई क्योंकि उसमें कवि के अनुभवों

की व्यापकता एवं गहराई भरित होती है। रहीम को अपने जीवन में सब प्रकार की परिस्थितियों से गुजरना पड़ा था अतः उन्हें जीवन का विशाल एवं व्यापक अनुभव था। अपने जीवन में उन्होंने वैभव के सर्वोच्च दिन देखे थे तो विषम परिस्थितियों के कड़वे घूट भी पीने पड़े थे। जब वे चार-पाँच वर्ष के ही थे तो इनके पिता का देहान्त हो गया था अतः छोटी सी अवस्था में ही पितृत्व का बड़ा दुःख सहन करना पड़ा। इसके साथ ही उन्हें जीवन की कँटीली राहों में चलना पड़ा। इस प्रकार वे जीवन के शैशव काल से ही अभाव दुःख और निराशाओं से परिचित हो गये। लेकिन अपने अपार बुद्धि बल पराक्रम और कौशल से पर्याप्त सम्पत्ति और सम्मान अर्जित किया। यौवन काल में वे पारिवारिक दृष्टि से भी परम सुखी रहे क्योंकि माहबानु जैसी सुन्दर और सुशील पत्नी तीन पुत्र रत्न और दो पुत्रियों का पाना निश्चय ही पारिवारिक सुख की चरमसीमा थी। किन्तु जीवन के इस उत्कर्ष के साथ अपने हसते जीवन में ऐश्वर्य और सुख को भी ढलते देखा। सुख और वैभव के राज्य के विचरण करने वाले रहीम को अपने जीवन की सन्ध्या में अपमान दुःख और दारिद्र्य तथा चार-चार पुत्रों की असामयिक मृत्यु का अपार दुःख और दोनों ही पुत्रियों को असमय में ही प्राप्त वैधव्य जैसे असह्य दुःख को भी सहन करना पड़ा। जीवन के सुख-दुःख की इस आँख मिचौनी ने उनके भावुक कवि-हृदय को मथित कर दिया था अतः यह मंथन से उत्पन्न अनुभूति ही शब्दों में साकार होकर कविता बन गई। हृदय की अनुभूति से उत्पन्न होने के कारण ही रहीम की कविता पाठकों के हृदय पर वांछित प्रभाव डालने में सफल हुई है।

अकबर का साम्राज्य बहुत विशाल था। उस विशालतम साम्राज्य के नवरत्नों में से रहीम भी एक थे। राज्य दरबार में रहने के कारण वे छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े व्यक्ति से मिलते थे तथा अनेक देशों में युद्ध एवम् राज्य कार्य के लिये जाने से उनके अनुभव का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया था। अतः उनकी कविता में जीवन के इस विशाल अनुभव की अभिव्यक्ति होना सर्वथा स्वाभाविक था। पण्डित रामचन्द्र शुक्ल ने एक स्थान पर लिखा है—"जीवन की सच्ची परिस्थितियों के मार्मिक रूप को ग्रहण करने की क्षमता

के समय तो मित्र भी शत्रु के समान व्यवहार करने लगते हैं ठीक उसी प्रकार जैसे कोई स्त्री अपने आँचल से मार्ग में दीपक की रक्षा करती जाती है लेकिन दीपक उसी को जला डालता है—

'जिहि आँचल दीपक दुरयो हन्यो सो ताही गात'।
रहिमन असमय के परे मित्र शत्रु ह्वै जात॥"

प्राय यह देखने म आता है कि अल्पज्ञ मनुष्य भी खुशामद और म
वालों से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने मे सफल हो जाते हैं और गुणवान मनु
इन हीन कर्मों को करन मे असमर्थ होने के कारण असफल रह जाते हैं—ऐ
समय मे वे अल्पज्ञ सफल लोग गुणी व्यक्तियों पर फब्तियाँ कसते हैं ताने
मारते हैं अपनी सफलता का ढिंढोरा पीटते हैं और हर उपाय से उन्हें नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हैं। ऐसे समय में गुणी और बुद्धिमान मनुष्य का मौन रह जाना ही श्रेयस्कर रहता है क्योंकि विरोध करने पर उन्हीं की हानि सम्भव है। कविवर रहीम भी इस परिस्थिति का अपने जीवन में अनुभव कर चुके थे— इसीलिये व इसे अन्योक्ति पद्धति पर बड़े मार्मिक ढंग से रखने को समर्थ हो सके हैं—

पावस देखि रहीम मन कोइल साधे मौन।
अब दादुर वक्ता भये हमको पूछे कौन॥"

दिन यदि बुरे हैं तो चुप होकर बैठना ही श्रेयस्कर होता है किन्तु फिर भी रहीम एक आशावादी की भाँति पुन अच्छे दिन आने की कामना करते हैं—

'रहिमन चुप ह्वै बैठिए, देखि दिनन के फेर।
जब नीके दिन आइहैं बनत न लगिहै देर॥"

क्योंकि विपत्ति अधिक समय तक नहीं रहती। जिस प्रकार अंधकार पूर्ण रात्रि की समाप्ति के बाद प्रभात का आगमन होता है उसी प्रकार दुःखों के बाद सुख और उल्लास का आगमन होता है—

विपति भए धन ना रहै रहै जो लाख करोर।
नभ तारे छिपि जात हैं ज्यों रहीम भए भोर॥

रहीम की कविता से सभी साक्षर और निरक्षर परिचित हैं तो उसका कारण यही है कि उन्होंने जीवन के अनुभवों को सहज रूप में व्यक्त कर दिया है। इसीलिए तो आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनके सम्बन्ध में लिखा है— संसार का इन्हें गहरा अनुभव था ऐसे अनुभव के मार्मिक पक्ष को ग्रहण करने की भावुकता इनमें अद्वितीय थी। अपने उदार और ऊँचे हृदय को संसार के वास्तविक व्यवहारों के बीच रखकर जो सम्वेदना इन्होंने प्राप्त की है उसी की व्यंजना अपने दोहों में की है। तुलसी के वचनों के समान रहीम के वचन भी हिन्दी भाषी भू भाग में सर्वसाधारण के मुंह पर रहते हैं इसका कारण है जीवन की सच्ची परिस्थितियों का अनुभव। यही कारण है उनके दोहे पढ़े लिखों में जितने प्रिय हैं उतने ही प्रिय जन साधारण में हैं और उनमें कहावतों के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। इनके नीति के दोहों को तो ग्रामीण जन भी बात-बात में प्रयोग करते रहते हैं। रहीम की लोकप्रियता का यह ज्वलंत प्रमाण है। अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही व्यक्ति कार्य कर सकता है। छोटा व्यक्ति बड़े व्यक्तियों का कार्य कोशिश करने पर भी नहीं कर सकता जैसे कि चूहे की खाल से नगाड़े को नहीं मढ़ा जा सकता—

'रहिमन छोटे नरन सों होत बड़ो नहिं काम।
मढ़ो दमामो ना बनै सौ चूहे के चाम॥"

लेकिन छोटे बिल्कुल ही महत्वहीन हों ऐसी बात भी नहीं है क्योंकि जहां एक छोटी वस्तु से कार्य सिद्ध होता है वहां बड़ी वस्तु भी कुछ नहीं कर सकती। जहां सुई की जरूरत है वहां बड़ी तलवार से भी कार्य सिद्ध नहीं हो सकता—

"रहिमन देखि बड़ेन को लघु न दीजिए डारि।
जहाँ काम आवे सुई कहा करै तरवारि॥"

जीवन की गहरी से गहरी अनुभूति को रहीम ने इतनी मार्मिकता और सरलता से रख दिया है कि चकित रह जाना पड़ता है। प्रेम करना जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य है। प्रेमीजन विरले ही मिलते हैं और उनसे भी प्रेम

सम्बन्ध बनाये रखने में बहुत विरले ही समर्थ हो पाते हैं। अतः यदि प्रेम सम्बन्ध किसी प्रकार टूट जाता है तो फिर प्रेम सम्बन्ध जोड़ने में पहली जैसी मधुरता नहीं आ पाती है जैसे कि डोरे के टूट जाने के बाद फिर जोड़ लगाने से गाँठ पड़ ही जाती है—रहीम ने इसी बात को बड़ी मार्मिकता और सुन्दरता से निम्न दोहे में व्यक्त किया है—

"रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो छिटकाय।
टूटे से फिर ना मिले मिले गाँठ पड़ जाय॥"

इस प्रकार हम देखते हैं कि रहीम हमें अच्छी जिन्दगी जीने की बड़ी है बड़ी सीख कविता के माध्यम से बड़ी कुशलता से दे देते हैं। उनकी सीख चूँकि उनके व्यापक अनुभवों की प्रतिफलन होती है अतः उसका प्रभाव शीघ्र और निश्चित होता है। जैसा कि डॉ॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है—"जो साहित्य केवल कल्पना विलास है जो समय काटने के लिये लिखा जाता है, वह बड़ी चीज नहीं है। बड़ी चीज वह है जो मनुष्य को आहार निद्रा आदि पशु सामान्य धरातल से ऊपर उठाता है। मनुष्य का शरीर दुर्लभ वस्तु है उसे पाना ही कम तप का फल नहीं है पर उसे महान् लक्ष्य की ओर उन्मुख करना और भी श्रेष्ठ कार्य है। रहीम का काव्य हमें पशु सामान्य जीवन से उठने की प्रेरणा देता है—वह मात्र विलास या मनोरंजन का साधन नहीं बनता। वह हमें जीवन से ऊपर उठा कर किसी अतीन्द्रिय कल्पना लोक में भी नहीं उड़ाता अपितु वह तो हमें इसी जीवन के सहज सत्यों को हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है ताकि हम अपने जीवन को अधिक सुखी अधिक सक्षम अधिक सुन्दर बना सकें। डा॰ रामकुमार वर्मा ने उनके सम्बन्ध में पूर्णतः सत्य ही लिखा है—"इनकी भाषा के पीछे जो भाव हैं वे एकान्त सत्य होकर सजीव हैं जिससे मानव-जीवन का अटूट सम्बन्ध है। मर्म की बात कहने में रहीम बड़े पटु हैं। उनकी रचना के पीछे एक ऐसा हृदय है जिसमें अनुभव मर्मदृष्टि और सरसता है। इसी कारण उनकी कविता लोकप्रिय और अमर है। इनकी कविता इतनी श्रेष्ठ है कि इसमें कल्पना के भिन्न रहते हुए भी सरसता है और वह हमारे जीवन के निकट है।"

रहीम पर पूर्ववर्त्ती साहित्य का प्रभाव

रहीम ने संस्कृत अरबी फारसी तुर्की हिन्दी आदि भाषाओं के प्रसिद्ध ग्रन्थों का अध्ययन किया था फलतः वे अनेक भाषाओं के साहित्य और शास्त्रों के मर्मज्ञ और पंडित हो गये थे। राज्य दरबार में निरन्तर रहने के कारण वे अनेक प्रकार के विद्वान और सामान्य जनों के सम्पर्क में भी आये थे फलस्वरूप वेद शास्त्रों के अतिरिक्त राजनीति और व्यवहारिक ज्ञान में भी निष्णात हो गये थे। रहीम के इस गम्भीर अध्ययन की छाप उनकी कविता में—विशेषकर दोहों में—यत्र-तत्र बड़ी स्पष्टता के साथ में झलकती है। संस्कृत साहित्यशास्त्र के पंडित होने के कारण ही वे हिन्दी में रीति परम्परा का श्रीगणेश सा करते दिखाई पड़ते हैं। नायिका भेद का स्पष्ट वर्णन उन्होंने अपनी कविता में किया है। हिन्दी में यह नई चीज थी जिसका रीतिकाल में विशेष प्रचलन हुआ। उनका नख शिख-वर्णन और विप्रलम्भ तथा सम्भोग शृङ्गार का वर्णन भी आगे आने वाली रीतिकालीन परिपाटी का पूर्वाभास था। संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुशीलन के कारण ही यह सम्भव हो सका। अपने पूर्ववर्ती साहित्य के व्यापक अध्ययन के कारण ही रहीम के काव्य में यत्र तत्र पूर्व कवियों के भावों की स्पष्ट छाया दिखाई देती है। उनके दोहों में ही संस्कृत के पंचतंत्र 'चाणक्य नीति' शार्ङ्गधर, अमरुक आदि ग्रन्थों और कवियों के भाव की छाया स्पष्ट लक्षित होती

है। किन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि रहीम ने अपनी कविता दूसरों के भावों के आधार पर ही की है। वास्तव में बात यह है कि प्रत्येक साहित्यकार अपने पूर्ववर्ती साहित्यकारों से प्रभावित होता है। प्रत्येक श्रेष्ठ साहित्यकार का साहित्य न तो नितान्त नूतन प्रयोग होता है और न ही नितान्त परम्परा का पालन मात्र। संसार के बड़े-बड़े समर्थ कवियों ने अपने पूर्ववर्ती कवियों के भावों को निस्संकोच अपनाया है। विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार कालिदास शेक्सपीयर और तुलसी का साहित्य भी शतप्रतिशत मौलिक नहीं है—उन पर भी पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव है। अंग्रेजी के एक विद्वान समालोचक ने शेक्सपीयर के कई नाटकों की पंक्तियाँ गिनकर यह सिद्ध किया है कि वे पूर्ववर्ती साहित्य के अनुकरण पर लिखी गई हैं। उनके अकेले 'हेनरी षष्ठ' नाटक की कुल ६०४३ पंक्तियों में केवल १८९९ पंक्तियाँ ही मौलिक मिलीं। शेष पंक्तियों पर अन्य साहित्यकारों का प्रभाव है। महाकवि तुलसीदास इस विश्व प्रसिद्ध काव्य 'रामचरित मानस' पर वाल्मीकि की 'रामायण' 'श्रीमद्भागवत' 'अध्यात्म रामायण' 'प्रसन्नराघव' 'हनुमन्नाटक' आदि अनेक ग्रन्थों का प्रभाव लक्षित होता है। 'सूर सागर' पर तो 'भागवत' का इतना प्रभाव है कि कुछ लोग उसे भागवत का अनुकरण मात्र कह बैठते हैं।

किन्तु जैसा कि बताया जा चुका है शतप्रतिशत मौलिक साहित्य की रचना नितान्त मुश्किल है इसीलिये एक आलोचक ने लिखा है—'अपने से पूर्व होने वाले कवियों के भाव अपनाने का यदि विचार किया जाय तो हिन्दी का कोई भी कवि इस दोष से अछूता न छूटेगा। कविता आकाश के सूर्य और चन्द्रमा को भी ग्रहण लग जायेगा। तारे भी निष्प्रभ हो खद्योत की भाँति टिमटिमाते देख पड़ेंगे।" पूर्व कवियों के भाव से तादात्म्य होना दोष नहीं है—अपितु मात्र दूसरों के भावों पर अपना कविता-महल खड़ा करना दोष है। जो प्रतिभाशाली कवि होता है वह यत्र-तत्र अन्य कवियों से प्रभावित होता हुआ भी अपनी मौलिकता को कायम रखता है। अन्य कवि के भाव को वह रत्न की भाँति सोने पर इस तरह जड़ देता है कि उसकी आभा कई गुनी बढ़

जाती है। संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक' में इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है—

'यदपि तदपि रम्यं यत्र लोकस्य किञ्चित् ।
स्फुरितमिदमितीयं बुद्धि रभ्युज्जिहाते ॥
अनुगतमपि पूर्वच्छायया वस्तुतादृक् ।
सुकवि रुपनिबध्नन् निन्द्यतांनोपयाति ॥"

अर्थात्—"जिस कविता में सहृदय भावुक को यह प्रतीत हो कि इसमें कुछ नवीन चमत्कार है फिर चाहे उसमें पूर्व कवियों की छाया ही क्यों न दिखलाई पड़े—भाव अपनाने में कोई हानि नहीं है—उस कविता का सृष्टा सुकवि अपनी बंध छाया से पुराने भाव को नवीन रूप देने के कारण, निन्दनीय नहीं समझा जा सकता।

जो कवि बहुज्ञ और बहुश्रुत होगा उसके काव्य में तो उसके अध्ययन की छाया दिखाई पड़ेगी ही। तुलसी ऐसे ही बहुज्ञ विद्वान थे अतः उनके काव्य में अन्य ग्रन्थों और कवियों का प्रभाव लक्षित होता है और अपने 'मानस' के प्रारम्भ में तो उन्होंने नाना पुराण निगम आदि के आधार पर ग्रन्थ-रचना की बात को स्वीकृति भी प्रदान की है। रहीम भी बहुभाषाविद और अनेक शास्त्रों के पण्डित थे अतएव उनके काव्य में पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव लक्षित हो तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है। अंग्रेजी के प्रसिद्ध साहित्यकार इमर्सन का इस सम्बन्ध में कथन बिल्कुल उचित ही है—"साहित्य में यह एक नियम सा हो गया है कि यदि एक कवि यह दिखला सके कि उसमें मौलिक रचना करने की प्रतिभा है तो उसे अधिकार है कि वह औरों की रचनाओं को इच्छानुसार अपने व्यवहार में लावे। विचार उसी की सम्पत्ति है जो उसका आदर-सत्कार कर सके—सही ढंग से उसकी स्थापना कर सके।

यहाँ हमने रहीम के कतिपय दोहों को लेकर यह दिखाने की चेष्टा की है कि उन पर अपने पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव कितना और कैसा पड़ा है। निश्चय ही रहीम अपने पूर्ववर्ती कवियों के आभारी हैं किन्तु उनके

परवर्ती कवि भी रहीम के कम आभारी नहीं हैं क्योंकि अनेक परवर्ती कवियों ने उनके भावों को निस्संकोच अपनाया है। रहीम के सम्बन्ध में यह बात तो सत्य ही है कि उन्होंने पूर्ववर्ती कवियों के भाव का प्रभाव ही ग्रहण किया है—उसका ज्यों का त्यों अनुकरण मात्र नहीं किया है। यही कारण है कि रहीम के दोहों पर उनके अपनेपन की छाप है और इसीलिये वे दोहे हिन्दी में सर्वाधिक लोकप्रिय हो सके। अब हम उदाहरण स्वरूप कुछ ऐसे संस्कृत और हिन्दी के छन्दों को देते जिनकी छाया रहीम के दोहों में लक्षित होती है। टीका करते समय भी यह प्रयत्न किया गया है जहाँ अन्य कवियों से भाव सादृश्य लक्षित हो—उसका उल्लेख कर दिया जाये।

"छितिकां दीपितो यस्य फलं भग्नो भवेच्च।
मित्रश्लिष्टा तु या प्रीतिम् सा स्नेहेन वर्धते॥"

—पंचतन्त्र

रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो छिटकाय।
टूटे से फिर ना मिले मिले गाँठ पड़ जाय॥'

× × × —रहीम

"आपत्काले तु सम्प्राप्ते यन्मित्रं मित्रमेव तत्।
वृद्धि काले तु सम्प्राप्ते दुर्जनोऽपि सुहृद् भवेत्॥"

—पंचतन्त्र

"कहि रहीम सम्पति सगे बनत बहुत बहु रीत।
बिपति कसौटी जे कसे, सो ही साँचे मीत॥"

× × × —रहीम

"वरं वनं व्याघ्रगजादिसेविते जलेनहीनं बहुकण्टकावृतम्।
तृणानि शय्या परिधान वल्कलं, न बंधु मध्ये धनहीन जीवितम्॥"

—पंचतन्त्र

"कह रहीम कानन भलो, वास करिय फल भोग।
बन्धु मध्य धनहीन ह्वै, बसिबो उचित न होय॥"

—रहीम

× × ×

"उदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमयेतथा ।
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता ॥'

—पंचतन्त्र

'जगत जाही किरन सों भपकत ताही कांति ।
त्यौं रहीम सुख दुख सब बढ़त एक ही भांति ॥"

—रहीम

× × ×

"दाता लघुरपि सेव्यो भवति न कृपणो महानपि समृद्ध्या ।
कूपोऽन्तः स्वादुजलः प्रीत्यै लोकस्य न समुद्रः ॥"

—पंचतन्त्र

"धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बड़ाई कौन है जगत पियासो जाय ॥"

× × × —रहीम

'पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः
पयोमुचाम्भः क्वचिदस्ति पास्यं
परोपकाराय सतां विभूतयः ।

—वेदेस्वर

"तरुवर फल नहिं खात हैं सरवर पियहिं न पान ।
कहि रहीम परकाज हित संपति संचहि सुजान ॥"

× × × —रहीम

'येषां न विद्या तपो न दानं ।
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मं ।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता ।
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥"

—चाणक्य नीति

"रहिमन विद्या बुधि नहीं नहीं धरम जस दान ।
भू पर जनम वृथा धरे, पसु बिनु पूंछ बिषान ॥"

—रहीम

× × ×

"याचनाहि पुरुषस्य महत्त्वं नाशयत्यखिलमेव तथाहि ।
सद्य एव भगवानपि विष्णुर्वामनो भवति याचितुमिच्छन् ॥

—भारवि

"रहिमन याचकता गहे बड़े छोट ह्वै जात ।
नारायण हू को भयो बावन अंगुर गात ॥"

—रहीम

× × ×

"विकृतिं नैव गच्छन्ति सङ्गदोषेण साधवः ।
आवेष्टितं महासर्पैश्चन्दनं न विषायते ॥'

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग ।
चन्दन विष व्यापत नहीं लिपटे रहत भुजंग ॥'

—रहीम

× × ×

सच्छिद्रनिकटे वासो न कर्तव्य कदाचन ।
घटी पिबति पानीयं ताड्यतेझल्लरी यथा ॥"

—शार्ङ्गधर

रहिमन नीच प्रसंग ते नित प्रति लाभ बिकार ।
नीर चुरावै सम्पुटी मार सहत घरियार ॥

—रहीम

× × ×

'यद्वदन्ति चपलेत्यपवादं नैव दूषणमिदं कमलाया ।
दूषणं जलनिधेर्हि भवेत्तद्यत्पुरातनपुमाय ददौताम् ॥"

—अमरुक

"कमला थिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय ।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय ॥"

—रहीम

× × ×

"दुर्जनेन समं सख्यं प्रीतिं चापि न कारयेत ।
उष्णो दहति चाङ्गारः शीतः कृष्णायते करम् ॥"

"ओछे को सतसंग रहिमन तजहु अंगार ज्यों।
तातो जारै अंग सीरो पै कारो लगै॥"

—रहीम

\+ + +

"नवन नवन बहु अंतरा नवन नवन बहु बान।
ये तीनों बहुते नवें, चीता चोर कमान॥"

—कबीर

तथा—

"नवनि नीच कै अति दुखदायी। जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई॥"

—तुलसी

"यह रहीम मानै नहीं दिल से नवा न होय।
चीता चोर कमान के नए ते अवगुन होय॥"

—रहीम

\+ + +

"मीन काटि जल धोइये, खाये अधिक पियास।
तुलसी प्रीत सराहिये मुए मीत की आस॥"

—तुलसी

"जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन को मोह।
रहिमन मछरी नीर को तऊ न छाड़त छोह॥"

—रहीम

× + +

"कुसमय मीत काको कवन।
ब्याध गिरत बाण बेध्यो कोटि कानन पवन।
अंग शोणित भयो बैरी, खोज दीनो तवन॥'

—सूर

"रहिमन असमय के परे हित अनहित ह्वै जाय।
बधिक बधे मृग बान सों रुधिरै देत बताय॥"

रहीम सतसई की टीका

महादेव वश हो जाता है । कवि ने अपनी 'सतसई' के प्रारम्भ में गंगा स्तुति परक यह दोहा मंगलाचरण स्वरूप रखा है ।

(२)

जिहि रहीम मन आपनो, कीन्हो चारु चकोर ।
निसि वासर लाग्यो रहै, कृष्ण चन्द्र की ओर ॥

अर्थ—जिस प्रकार चकोर एकटक चन्द्रमा को देखा करता है उसी प्रकार रहीम कहते हैं कि मेरा मन रूपी चकोर भी श्रीकृष्ण रूपी चन्द्रमा को लगातार देखता रहता है ।

विशेष—कवि की कृष्ण विषयक भक्ति भावना का यह दोहा सुन्दर परिचायक है ।

(३)

रहिमन कोऊ का करै, ज्वारी, चोर लबार ।
जो पत राखनहार हैं, माखन-चाखन हार ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जुआरी चोर और लफंगा उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते जिसकी लाज रखने वाले माखन को चखने वाले भगवान श्रीकृष्ण स्वयं हैं ।

विशेष—इस दोहे में भी कवि की भगवान श्रीकृष्ण के प्रति आस्था का परिचय मिलता है । भगवान श्रीकृष्ण ने जुआरी शकुनि से पाण्डवों की रक्षा की थी ब्रह्मा ने जब ग्वाल-बालों की गायों को चुराया था तो ग्वाल-बालों की रक्षा ब्रह्मा से की थी और उन्होंने दुःशासन से द्रौपदी की रक्षा की थी । कवि का हिन्दुओं का पौराणिक ज्ञान भी बहुत व्यापक है ।

(४)

रहिमन गली है साँकरी, दूजो न ठहराहिं ।
आपु अहै तो हरि नहीं, हरि तो आपुन नाहिं ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि मन की गली सँकरी होती है इसमें दो चीजें एक साथ नहीं समा सकती । यदि इसमें अहङ्कार है तो भगवान नहीं आ सकते और भगवान के आने पर अहङ्कार को स्थान नहीं मिल सकता ।

सी भाव साम्य पर कहा है—

गरि नहीं पब हरि है मैं नाहि।

किटी, ता मैं दो न समाहि॥

ही भाव है—

सखि दोय।

न आयो ताहि क्यों आवे कोय॥"

(५)

नहीं, भई पूजा में हानि।

नि हैं, राम के किंकर कानि॥

रहीम सतसई— नहीं रहा फलत पूजा भली भांति नहीं हो

सका ममदूत कैसे प्रतिष्ठा रख सकते हैं।

(६)

[illegible] चरन सरोज [illegible] हीं आन्यो सदा उपाधि।

हरि न [illegible] नो जनम गँवायो बाधि॥

प्रथ—गंगा की स्तुति है [illegible] हीं और व्यर्थ की बकवास में लिप्त रहा

हीम कहते हैं—हे गंगे! तुम्हारे [illegible] र्यों मे व्यर्थ ही अपना जीवन बर्बाद

और महादेव का [illegible] कर लेते हैं।

क्योंकि विष्णु रूप बनाने पर तुम [illegible] ति रहीम की आस्था का द्योतक है।

और जो उचित नहीं है [illegible] साम्य पर लिखा है—

तुम्हें आदर के साथ [illegible] पर [illegible] आन्यो विषय सवार।

विशेष—(१) गंगा के प्रति [illegible] जनम गँवायो बार॥

भक्ति भाव प्रकट किया है [illegible]

मत होता है। मुसलमान होते हुए भी [illegible] हुत विषय सपटाय।

में एक उदाहरण है। र गुलियाए खाय॥

(२) पुराणों में यह प्रसिद्ध है कि [illegible] राम मन में नहीं रखा और विषयों

और महादेवजी की जटाओं में रही हैं। [illegible] ती तो जाना पसंद करते हैं

समाज में भी लिखा [illegible] जाते हैं।

रहीम सतसई—मूल व टीका

(१)

अच्युत चरन तरंगिनी, सिव सिर-मालति-माल।
हरि न बनायो सुरसरी, कीजौ इन्दव भाल॥

अर्थ—गंगा की स्तुति से अपनी 'सतसई' का प्रारम्भ करते हुए कविवर रहीम कहते हैं—हे गंगे! तुम्हारी महिमा से अवगाहन करने के बाद विष्णु और महादेव का पद प्राप्त कर लेते हैं। लेकिन तुम मुझे विष्णु रूप न बनाना क्योंकि विष्णु रूप बनाने पर तुम चरणों से निकलने वाली नदी कहलाओगी और जो उचित नहीं है अतएव तुम मुझे महादेव रूप ही बनाना ताकि मैं तुम्हें आदर के साथ मस्तक पर धारण कर सकूं।

विशेष—(१) गंगा के प्रति कवि ने जिस तन्मयता और श्रद्धा से अपना भक्ति भाव प्रकट किया है उससे कवि का हिन्दू धर्म की ओर रुझान दृष्टिगत होता है। मुसलमान होते हुए भी उनकी यह धार्मिक उदारता अपने आप में एक उदाहरण है।

(२) पुराणों में यह प्रसिद्ध है कि गंगा विष्णु के चरणों से निकली है और महादेवजी की जटाओं में रही है। पुराणों में इसके स्नान की महिमा के सम्बन्ध में भी लिखा है कि इसके स्नान के बाद मनुष्य विष्णु रूप और

महादेव रूप हो जाता है। कवि ने अपनी 'सतसई' के प्रारम्भ में मंगल स्तुति परक यह दोहा मंगलाचरण स्वरूप रखा है।

(२)

जिहि रहीम मन आपनो, कीन्हो चारु चकोर।
निसि वासर लाग्यो रहै कृष्ण चन्द्र की ओर॥

अर्थ—जिस प्रकार चकोर एकटक चन्द्रमा को देखा करता है उसी प्रकार रहीम कहते हैं कि मेरा मन रूपी चकोर भी श्रीकृष्ण रूपी चन्द्रमा को लगातार देखता रहता है।

विशेष—कवि की कृष्ण विषयक भक्ति भावना का यह दोहा सुन्दर परिचायक है।

(३)

रहिमन कोऊ का करै, ज्वारी, चोर, लबार।
जो पत राखनहार हैं माखन-चाखन हार॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जुआरी चोर और लफंगा उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते जिसकी लाज रखने वाले माखन को चखने वाले भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं हैं।

विशेष—इस दोहे में भी कवि को भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति आस्था का परिचय मिलता है। भगवान् श्रीकृष्ण ने जुआरी शकुनि से पाण्डवों की रक्षा की थी ब्रह्मा ने जब ग्वाल-बालों की गायों को चुराया था तो ग्वाल-बालों की रक्षा ब्रह्मा से की थी और लफंगे दुःशासन से द्रौपदी की रक्षा की थी। कवि का हिन्दुओं का पौराणिक ज्ञान भी बहुत व्यापक है।

(४)

रहिमन गली है साँकरी दूजो न ठहराहिं।
आपु अहै तो हरि नहीं, हरि तो आपुन नाहिं॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि मन की गली सकरी होती है इसमें दो चीजें एक साथ नहीं समा सकती। यदि इसमें अहङ्कार है तो भगवान् नहीं आ सकते और भगवान् के आने पर अहङ्कार को स्थान नहीं मिल सकता।

विशेष—कबीर ने भी इसी भाव साम्य पर कहा है—

"जब मैं था तो हरि नहीं अब हरि हैं मैं नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी ता मैं दो न समाहिं॥'

भारतेन्दु का भी लगभग यही भाव है—

"रहे क्यों एक म्यान असि दोय।
जिन नैनन में हरि रस छायो ताहि क्यों भावे कोय॥"

(५)

राम-नाम जान्यो नहीं, भई पूजा में हानि।
कहि रहीम क्यों मानि हैं, जम के किंकर कानि॥

अर्थ—राम-नाम से परिचय नहीं रहा फलतः पूजा भली भाँति नहीं हो पाई, रहीम कवि कहते हैं कि फिर भला यमदूत कैसे प्रतिष्ठा रख सकते हैं।

(६)

राम-नाम जान्यो नहीं जान्यो सदा उपाधि।
कहि रहीम तिहि आपुनो जनम गँवायो बादि॥

अर्थ—राम के नाम को जाना नहीं और व्यर्थ की बकवास में चित्त लगा रहा रहीम कवि कहते हैं कि ऐसे मनुष्यों ने व्यर्थ ही अपना जीवन बर्बाद किया।

विशेष—यह दोहा राम-नाम के प्रति रहीम की आस्था का द्योतक है। महाकवि तुलसीदास ने भी इसी भाव के साम्य पर लिखा है—

राम-नाम जान्यो नहीं जान्यो विषय सवाद।
तुलसी नरवपु पाइ कै जनम गँवायो बाद॥

(७)

रहिमन राम न उर धरै रहत विषय लपटाय।
पसु खर खात सवाद सों गुर गुलियाए खाय॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि राम का ध्यान मन में नहीं रखा और विषयों में लिपटना पसंद किया जैसे कि पशु कभी घास तो खाना पसंद करते हैं लेकिन मीठा गुड़ जबरन गले में डालने पर ही खाते हैं।

(८)

समय दसा कुल देखि कै, लोग करत सम्मान ।
रहिमन दीन अनाथ को, तुम बिन को भगवान ॥

अर्थ—लोग व्यक्ति का समय दशा और कुल देखकर सम्मान करते हैं लेकिन रहीम कवि कहते हैं गरीब और अनाथ व्यक्ति का तो एकमात्र सम्बल श्रीभगवान् ही होते हैं ।

(९)

अमर बेलि बिनु मूल की प्रतिपालत है ताहि ।
रहिमन ऐसे प्रभु तजि खोजत फिरिए काहि ॥

अर्थ—बिना जड़ की अमरबेल को पोषित करने वाले प्रभु को तज तू किसके आश्रय की खोज करता है अर्थात् ऐसे शक्तिमान् प्रभु को छोड़ कौन ऐसा है जो उसकी बराबरी कर सके ।

(१०)

गहि सरनागति राम की भवसागर की नाव ।
रहिमन जगत उधार कर और न कछू उपाय ॥

अर्थ—राम की शरण से भव-सागर से तेरी नाव पार हो जायेगी—जगत से पार होने का यही उपाय है ।

(११)

मुनि नारी पाषाण ही, कपि पशु गुह मातंग ।
तीनों तारे राम जू तीनों मेरे अंग ॥

अर्थ—गौतम मुनि की स्त्री पत्थर की, बन्दर पशु थे और निषाद चाण्डाल था—लेकिन इन तीनों को ही आपने तार (उद्धार कर) दिया । मुझ में इन तीनों के अवगुण मौजूद हैं अर्थात् मेरा हृदय पाषाणवत् कठोर है पशु के समान मेरी पूजा में प्रवृत्ति है तथा मेरे आचरण चाण्डाल के समान हैं अतः जैसे आपने इन तीनों का उद्धार किया है तो मेरा भी उद्धार कीजिए क्योंकि मेरे में भी इन तीनों के अवगुण विद्यमान हैं ।

(१२)

भजौं तो काको मैं भजौं तजौं तो काको आन ।
भजन तजन ते बिलग हैं तेहि रहीम तू जान ॥

अर्थ—मैं किसको भजूं और किस का त्याग करूं जो आसक्ति तथा विरक्ति से पृथक हैं रहीम कवि कहते हैं कि वे ही उत्तम हैं ।

(१३)

भावी काहू न दही भावी दह भगवान ।
भावी ऐसो प्रबल है कहि रहीम यह जान ॥

अर्थ—होनहार ने किसे प्रभावित नहीं किया ? होनहार से तो श्रीभगवान स्वयं प्रभावित हुए थे । अतः रहीम कवि कहते हैं कि होनहार (भावी) से प्रबल कुछ नहीं है ।

(१४)

बिपति भए धन ना रहे रहे जो लाख करोर ।
नभ तारे छिपि जात हैं ज्यों रहीम भय भोर ॥

अर्थ—विपत्ति के बादल अधिक दिन तक नहीं रह पाते जो लाख और करोड़ की संख्या में छाये रहते थे । जैसे आकाश में तारे दिन के उदय होने से छिप जाते हैं वैसे ही दुःख के बादल भी छंट जाते हैं ।

(१५)

रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो छिटकाय ।
टूटे से फिर ना मिले मिले तो गाँठ पड़ जाय ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि प्रेम का धागा नाजुक होता है इसे झटका देकर तोड़ना उचित नहीं होता क्योंकि यह धागा एकबार टूट जाने के पश्चात् फिर मिल नहीं सकता और यदि मिलाया भी जावे तो टूटे हुए धागों के बीच में गाँठ पड़ जाती है ।

(१६)

रहिमन प्रीति सराहिये मिले होत रंग दून ।
ज्यों जरदी हरदी तजै तजै सफेदी चून ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि चूने और हल्दी के से मेल वाले प्रेम की सराहना करनी चाहिए क्योंकि हल्दी और चूना दोनों ही मिलकर अपना पीला और सफेद रंग छोड़ कर लाल रंग के हो जाते हैं। ऐसे ही प्रेम में दो प्रेमी हृदय अपना अस्तित्व भूल कर एकाकार हो जाते हैं वास्तव में ऐसा ही प्रेम सराहनीय है।

(१७)

जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन को मोह।
रहिमन मछरी नीर को तऊ न छाँड़त छोह॥

अर्थ—मछली के जाल में फँस जाने से तो जल मछली का मोह छोड़कर जाल में से बह जाता है लेकिन मछली जल का प्रेम फिर भी नहीं छोड़ती और जल के बिछोह में तड़प-तड़प कर अपनी जान दे देती है।

भाव साम्य—

(१) मीन काट जल धोइये खाये अधिक पियास।
तुलसी प्रीत सराहिये मुये मीत की आस॥

—तुलसी

(२) प्रेमी प्रीति न छाँड़ही होत न प्रगते हीन।
मरे परेहू उदर में क्यों जल चाहत मीन॥ —वृन्द

(१८)

धनि रहीम गति मीन की, जल बिछुरत जिय जाय।
जियत कंज तजि अनत बसि कहाँ भौर को भाय॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि मछली की दशा धन्य है जो अपने प्रिय जल से बिछुड़ते ही अपनी जान दे देती है लेकिन भ्रमर की रुचि सराहनीय नहीं है जो अपने प्रिय कमल को छोड़ कर अन्य स्थान पर चला जाता है।

(१९)

मथत मथत माखन रहै दही मही बिलगाय।
रहिमन सोई मीत है भीर परे ठहराय॥

अर्थ—मथते-मथते मक्खन तो रह जाता है और दही से मट्ठा अलग हो

जाता है, रहीम कवि कहते हैं कि वही मित्र है जो विपत्ति के समय भी साथ देता है।

(२०)

रहिमन पैड़ा प्रेम को निपट सिलसिली गैल।
बिछलत पाँव पिपीलि को लोग लदावत बैल॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि प्रेम का मार्ग एकदम फिसलना है जिस पर चींटी तक के पाँव फिसल जाते हैं और लोग उस पर बैल लाद कर चलते हैं अर्थात् प्रेम के मार्ग पर चलना अत्यन्त ही दुष्कर है।

(२१)

कहा करौं बैकुण्ठ लै कल्पवृक्ष की छाँह।
रहिमन ढाक सुहावनो जो गल पीतम बाँह॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि यदि प्रिय अपने समीप न हो तो स्वर्ग प्राप्त करके तथा कल्पवृक्ष की छाया में बैठ कर क्या करूँगा और यदि गले में प्रियतम की बाँह पड़ी हो तो ढाक का वृक्ष भी सुहावना लगेगा।

(२२)

जलहिं मिलाय रहीम ज्यों, कियो आप सम छीर।
अंगवहिं आपुहिं आप त्यों सकल आँच की भीर॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार दूध में जल के मिलाने पर दूध जल को अपने ही समान बना लेता है उसी प्रकार आग पर चढ़ाए जाने पर मित्रता के कारण जल आग की सारी तपन को स्वयं अङ्गीकार कर लेता है और भाप के रूप में उड़ जाता है।

(२३)

जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं यह रहीम जग जोय।
मंड़ए तर की गाँठ में गाँठ गाँठ रस होय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि संसार जानता है कि जहाँ गाँठ (गन्ने आदि की गाँठ, मनोमालिन्य) होती है वहाँ रस नहीं रहता परन्तु विवाह मण्डप के

गाँठ वर-वधू को परस्पर बाँधने वाली गाँठ के तो अंग-अंग में रस भरा होता है।

(२४)

जिहि रहीम तन मन लियो कियो हिए बिच भौन।
तासों दुख सुख कहन की रही बात अब कौन॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रिय ने मेरा शरीर और मन सब कुछ ले लिया है और जिसने मेरे हृदय में अपना निवास स्थान बना लिया है उस प्रिय से अब सुख और दुख कहने की कौन सी बात शेष रहती है। वह तो अब मुझसे एकाकार हो गया है।

(२५)

मैं सुलगे ते बुझ गए बुझ ते सुलगे नाहिं।
रहिमन वाहे प्रेम के, बुझि बुझि कै सुलगाहिं॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि लकड़ी आदि जो वस्तु भी सुलगती है वह सुलग कर बुझ जाती है और जब सुलग कर बुझ जाती है तो पुनः नहीं सुलगती। परन्तु प्रेम में जो लोग दग्ध होते हैं वह बुझ-बुझ कर भी सुलगते रहते हैं अर्थात् प्रेम की अग्नि सदैव जलती रहती है।

(२६)

जो रहीम तन हाथ है मनसा कहुँ किन जाहि।
जल में जो छाया परे, काया भीजति नाहिं॥

अर्थ—रहीम कवि शरीर की महत्ता प्रतिपादित करते हुए तथा मन को गौण बताते हुए कहते हैं कि यदि शरीर पास है तो कोई चिन्ता नहीं है मन तो कहीं भी जा सकता है जैसे कि यदि जल में शरीर की छाया पड़ते हुए भी शरीर उस जल से भीगता नहीं है।

(२७)

जो रहीम मन हाथ है तो तन कहुँ किन जाहि।
जल में जो छाया परे, काया भीजति नाहिं॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि मन अपने वश में हो तो शरीर कहीं भी

पता जाय कोई अन्तर नहीं पड़ता । जैसे यदि शरीर जल में नहीं है और शरीर की छाया जल में पड़ती है तो भी शरीर उससे भीगता नहीं ।

(२८)

टूटे सुजन मनाइए, जौ टूटे सौ बार ।
रहिमन फिरि फिरि पोइए, टूटे मुक्ताहार ॥

अर्थ—यदि अपना प्रिय सौ बार भी रूठे तो उस रूठे हुए प्रिय को मनाना चाहिए । क्योंकि यदि मोतियों का हार टूट जाय तो मोतियों को बार बार धागे में पिरो लेना चाहिए ।

(२९)

पसरि पत्र झंपहि पितहि सकुचि देत ससि सीत ।
कहु रहीम कुल कमल के को बैरी को मीत ॥

प्रसंग—जल कमल का पिता है और सूर्य कमल को खिलाता है पर जल को सोख लेता है । दूसरी ओर चन्द्रमा जल के लिए तो हितकारी है पर कमल को संकुचित कर देता है । अतः रहीम जी कहते हैं—

अर्थ—जब सूर्य उदित होता है तो कमल अपनी पंखुड़ियाँ फैला कर अपने पिता जल को छिपा लेता है और उसकी रक्षा करता है । जब चन्द्रमा निकलता है तो कमल अपनी पंखुड़ियों को समेट लेता है और चन्द्रमा की शीतलता जल तक जाने देता है । इस प्रकार सूर्य कमल का मित्र और जल का शत्रु है जब कि चन्द्रमा कमल का शत्रु और जल का मित्र है पर कमल और जल के प्रेम के कारण यह नहीं ज्ञात होता कि सूर्य और चन्द्रमा में से कौन कमल के कुल का शत्रु है और कौन मित्र है ।

(३०)

यह न रहीम सराहिये देन लेन की प्रीति ।
प्रानन बाजी राखिये हार होय कै जीत ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि केवल लेन देन से सम्बन्ध रखने वाले प्रेम की प्रशंसा न कीजिए । प्रेम में तो प्राणों को भी दाँव पर लगा देना चाहिए फिर चाहे जीत हो या हार, चाहे सफलता मिले या असफलता ।

(३१)

रहिमन इक दिन वे रहे बीच न सोहत हार।
वायु जो ऐसी बह गई बीचन परे पहार॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि एक समय था जब प्रेमी और प्रिय का हृदय मिलाते समय बीच में हार भी नहीं सुहाता था। पर अब हवा ऐसी बदल गई कि प्रेमी और प्रिय के बीच पहाड़ों की दूरी आ गई है। अब दोनों वियुक्त होकर दो स्थानों पर पड़े हुए हैं।

(३२)

रहिमन तीर की चोट ते चोट परे बचि जाय।
नैन बान की चोट ते चोट परे मरि जाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब मनुष्य पर बाण के प्रहार का आघात होता है तो वह चिकित्सा करने से बच भी जाता है पर नेत्र रूपी बाणों के प्रहार की चोट से मनुष्य आहत होकर उबर नहीं सकता मर ही जाता है। अतः साधारण बाणों से नयन-बाण की चोट अधिक कठोर होती है।

(३३)

रहिमन मनहिं लगाय के देखि लेहु किन कोय।
नर को बस करिबो कहा नारायन बस होय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि कुछ भी काम करना मनुष्य के हाथ में नहीं है वरन् भगवान के हाथ में है। यदि विश्वास न हो और चाहो तो किसी से मन लगा कर देख लो।

(३४)

रहिमन मारग प्रेम को मत मति हीन मझाव।
जो डिगिहै तो फिर कहूँ नहिं धरने को पाँव॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बुद्धिहीन लोगों को प्रेम के मार्ग में पैर नहीं रखना चाहिए। यदि प्रेम के मार्ग से एक बार विचलित हो गए तो फिर संसार में कोई ठिकाना नहीं रहता।

(१५)

रहिमन मैन तुरंग चढ़ि चलिबो पावक माँहि।
प्रेम पंथ ऐसा कठिन सब कोउ निबहत नाँहि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं प्रेम के मार्ग का निर्वाह प्रत्येक व्यक्ति नहीं कर सकता। प्रेम मार्ग पर चलना ऐसा कठिन है जैसे मोम के घोड़े पर चढ़ कर आग पर चलना।

(१६)

रहिमन सो न कछु गनै जासों लागे नैन।
सहि के सोच बेसाहियो गयो हाथ को चैन॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिससे प्रेम हो जाता है वह फिर और किसी वस्तु पर ध्यान नहीं देता। सब कुछ सहन करके वह चिन्ता मोल ले लेता है और सारा आराम उसके हाथ से निकल जाता है। उसे फिर प्रेम हो जाने पर फिर चैन नहीं मिलता केवल चिन्ता ही रहती है। जिस प्रकार कोई वस्तु मोल लेने के लिए कोई अन्य वस्तु देनी होती है उसी प्रकार चिन्ता को मोल लेने के लिए अपने हाथ में आए हुए चैन को देना पड़ता है।

(१७)

रौस बिगाड़े राज कूं मौस बिगाड़े मास।
सैन सबै सरदार की, चुगल बिगाड़े बास॥

अर्थ—आन्दोलन या झगड़ा राज्य को बिगाड़ देता है जमींदार सम्पत्ति को दुरुपयोग करके समाप्त कर देता है और चुगलखोर झूठी सच्ची चुगलियाँ कर के धीरे धीरे सरदार की चाल (रीति) को ही बिगाड़ देता है।

(१८)

यह प्रीति नहिं रीति यह नहीं पाछिलो हेत।
घटत घटत रहिमन घटै, ज्यों कर लीन्हे रेत॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार हाथ में लिया हुआ रेत धीरे धीरे छन छन कर गिर जाता है उसी प्रकार प्रेम धीरे धीरे घट जाय यह प्रेम की रीति नहीं है और न पहले किया हुआ प्रेम ही धीरे धीरे घटता है।

(३९)

विरह्रूप घन तम भयो, प्रवधि प्रास उद्योत ।
ज्यों रहीम भादों निसा चमकि जात खद्योत ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार भादों की रात में जुगनू चमक जाते हैं उसी प्रकार विरह रूपी घने अंधकार में अवधि की आशा रूपी प्रकाश चमक जाता है ।

(४०)

कहि रहीम जग मारियो, नैन-बान की चोट ।
भगत भगत कोऊ बचि गये चरन कमल की प्रोट ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि सम्पूर्ण संसार स्त्री के नैन रूपी बाणों की चोट से मर गया केवल कुछ भगवान के भक्त ही बच सके जिन्होंने भगवान के चरण रूपी कमलों की ओट ले ली थी ।

(४१)

कहु रहीम केतिक रही केतिक गई बिहाय ।
माया ममता मोह परि अन्त चले पछिताय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं बताओ तो तुम्हारा कितना जीवन रहा है और कितना समाप्त हो गया है । माया और ममता के मोह में पड़ कर ईश्वर का ध्यान न करने पर जीव अन्त में पछताता हुआ इस संसार से चला जाता है ।

(४२)

चरन छुए मस्तक छुए तेहु न छाँड़ति पानि ।
हियो छुवत प्रभु छोड़ि दै कहु रहीम का जानि ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस व्यक्ति के चरण छुए जाते हैं (जिसकी शरण में जाया जाता है) अथवा जो मस्तक पर हाथ रख देता है (किसी को आश्रय देता है) वह व्यक्ति भी फिर हाथ नहीं छोड़ता तब हृदय से प्रभु को याद करने पर प्रभु तुम्हारा त्याग करदें यह कैसे संभव है ।

(४३)

चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध नरेस ।
जा पर विपदा पड़ति है सो आवति य हि देस ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि मावव के राजा (राम) चित्रकूट में निवास कर रहे हैं। जिस व्यक्ति पर विपत्ति पड़ती है वही शरण लेने के लिए इस स्थान पर आता है।

विशेष—कहा जाता है रहीम जब स्वयं निर्धन हो गए और याचक की सहायता नहीं कर सके तो उन्होंने याचक को यह दोहा लिख कर रीवा नरेश के पास भेजा। रीवा-नरेश ने उस याचक को एक लाख रुपया दे दिया।

(४४)

जो रहीम करिबो हुतो ब्रज को इहै हवाल।
तो काहे कर पर धर्‌यो गोवर्धन गोपाल ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि हे कृष्ण! यदि आपको ब्रज को त्याग कर उसकी ऐसी ही अवस्था करनी थी तो इन्द्र से ब्रज की रक्षा करने के लिए हाथ पर गोवर्धन पर्वत को क्यों धारण किया था?

(४५)

जो रहीम होतो कहूँ प्रभु गति अपने हाथ।
तो कोधौं केहि मानतो आप बड़ाई साथ ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि प्रभु की इच्छा मनुष्य के अधीन होती तो अपने बड़प्पन के गर्व में कोई मनुष्य किसी दूसरे को कोई महत्व ही नहीं देता।

(४६)

ज्यों नाचत कठपूतरी करम नचावत गात।
अपने हाथ रहीम ज्यों नहीं आपुने हाथ ॥

अर्थ—जिस प्रकार कठपुतली नचाने वाला कठपुतली को नचाता है उसी प्रकार कर्म (प्रारब्ध) मनुष्य के शरीर को नचाता है। प्रतीत तो ऐसा होता है कि सब काम हमारे ही हाथों से हो रहे हैं पर वस्तुतः अपने हाथ में (बस में) कुछ भी नहीं है।

(४७)

तन रहीम है कर्म बस मन राखो ओहि ओर।
जल में उलटी नाव ज्यों, खैंचत गुन के जोर ॥

अर्थ—जिस प्रकार जल में बहती हुई नाव को बहाव की विपरीत दशा में लेजाने के लिए गुण (रस्सी) के ओर से खींचा जाता है उसी प्रकार यद्यपि शरीर तो कर्म के वश में होता है पर मन का ईश्वर की ओर लगाए रखना चाहिए। जिस प्रकार नाव बहाव की ओर बहती है उसी प्रकार शरीर भी कर्म के वश में होकर संसार की ओर प्रवृत्त होता है पर जिस प्रकार नाव को बहाव के विपरीत ले जाने के लिए रस्सी से खींचते हैं इसी प्रकार मनुष्य को भी अपने मन को गुण के सहारे ईश्वर की ओर सम्मुख रखना चाहिए।

(४८)

दिव्य दीनता के रसहिं, का जाने जग अंधु।
भली बिचारी दीनता दीन बंधु से बंधु॥

अर्थ—यह अन्धा संसार निर्धनता के अलौकिक स्वाद को क्या समझ सकता है? वह बेचारी दीनता (निर्धनता) ही भली जिसके दीनबन्धु भगवान जैसे बन्धु (भाई) हैं। विपत्ति पड़ने पर ही मनुष्य ईश्वर को याद करता है और तब ईश्वर उसकी रक्षा करता है।

(४९)

दुख नर सुनि हाँसी करैं धरत रहीम न धीर।
कही सुनै सुनि सुनि करै, ऐसे वे रघुवीर॥

अर्थ—लोग रहीम के दुख को सुन कर उपहास करते हैं पर रहीम को धैर्य नहीं बंधता। केवल भगवान राम ही ऐसे हैं जो विपत्ति कहे जाने पर उसे सुनते हैं और सुनकर सहायता करते हैं।

(५०)

प्रीतम छवि नयननि बसी, पर छवि कहा समाय।
भरी सराय रहीम लखि पथिक आय फिर जाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि प्रियतम कृष्ण की मोहिनी मूर्ति नैनों में बसी हुई है अब उसमें अन्य किसी देवता आदि की छवि कैसे आ सकती है। प्रिय की छवि से परिपूर्ण नैन भरी हुई सराय के समान है। यदि अन्य किसी की छवि पथिक के समान आती है तो स्वयं ही लौट जाती है। वहाँ उसे रहने को स्थान मिल ही नहीं पाता।

(५१)

भार झोंकि कै भार में, रहिमन उतरे पार।
पै बूड़े मँझधार में, जिनके सिर पर भार॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जो संसार के भार को त्याग देते हैं वे इस संसार के पार उतर जाते हैं, पर जिनके सिर पर संसार का भार लदा हुआ है वे बीच में ही डूब जाते हैं।

(५२)

मांगे मुकरि न को गयो केहि न त्यागियो साथ।
माँगत आगे सुख लह्यो ते रहीम रघुनाथ॥

अर्थ—ऐसा कौन सा मनुष्य है जो मांगे जाने पर अपनी बात से न नट गया हो? किस व्यक्ति ने मांगे जाने पर साथ नहीं छोड़ दिया? जब हम अपने साथियों से माँगना आरम्भ कर देते हैं तो वे हमारा साथ छोड़ देते हैं। किन्तु भगवान राम के माँगने के पूर्व ही सुख मिल जाता है। (जैसे विभीषण को माँगने से पूर्व ही राम ने लङ्का का राज्य दे दिया था)

भावसादृश्य—तुलना कीजिए—

'तव प्रसादस्य पुरस्तु सम्पद।'

(५३)

रहिमन तुम हम सों करी, करी-करी जो तीर।
बाढ़े दिन के मीत हो गाढ़े दिन रघुबीर॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार विपत्ति के दिनों में हाथियों ने अपने गजराज को छोड़ दिया था उसी प्रकार आपने भी विपत्ति में मेरा साथ छोड़ दिया। आप भी अच्छे दिनों के ही मित्र हैं।

(५४)

रहिमन धोखे भाव से मुख से निकसे राम।
पावत पूरन परम गति, कामादिक को धाम॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जो मनुष्य काम आदि सब पापों का घर है उसके मुख से यदि धोखे से भी राम का नाम निकल जाय तो वह पूर्ण परम गति को पा लेता है।

(५५)

सदा नगारा कूच का, बाजत आठों जाम।
रहिमन या जग आइकै, को करि रहा मुकाम॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि आठो याम (रात-दिन) इस संसार से चलने का नगाड़ा बजता रहता है, हर समय मृत्यु की सम्भावना बनी रहती है। इस संसार में आकर कौन सा प्राणी स्थायी रूप से रह सका है? सभी को मृत्यु आने पर यहाँ से परलोक को प्रस्थान कर देना पड़ता है।

(५६)

सौदा करौ सो करि चलौ, रहिमन याही घाट।
फिर सौदा पैहो नहीं, दूरि जान है बाट॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यह संसार एक बाजार के समान है। यहाँ इसी जन्म में जो कुछ सौदा करना हो कर लो, पुण्य आदि अर्जित करना हो अर्जित करलो। यहाँ से जाने के पश्चात् फिर क्रय विक्रय का अवसर नहीं मिलेगा क्योंकि मृत्यु के पश्चात् जिस मार्ग पर चलना होगा वह मार्ग बहुत लम्बा है।

(५७)

सम्पत सम्पति जानि कै सब को सब कछु देत।
दीन बन्धु बिन दीन की, को रहीम सुधि लेत॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि दीन बन्धु भगवान के अतिरिक्त अन्य कौन गरीबों का ध्यान रख सकता है? क्यों इस संसार में सब लोग उन सब को ही सब कुछ देते हैं जिनके पास सम्पत्ति है। जब लोग समझ लेते हैं कि अमुक व्यक्ति के पास तो स्थायी सम्पत्ति है तब उसी सम्पत्तिशाली व्यक्ति को वे लोग सब कुछ दे देते हैं निर्धनों को कोई कुछ नहीं देता।

(५८)

हुरि रहीम ऐसी करी ज्यों कमान सर पूर।
खैंचि आपनी ओर को, डारि दियो पुनि दूर॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार धनुष पर चढ़ाए हुए बाण को

पहले अपनी ओर खींचते हैं और फिर छोड़ कर बहुत दूर तक देते हैं उसी प्रकार हे भगवन् ! आपने मुझको पहले अब तो कृपा करके अपनी ओर खींचा पर पुनः आने से दूर कर दिया।

विशेष—'मुतन्नाम' के अनुसार श्रीनाथ जी के मन्दिर में प्रवेश करने में रुकावट होने पूर्व पर रहीम ने यह दोहा लिखा था।

(५९)

रहिमन कीन्ही प्रीति साहब को भाव नाहीं।
जिनके अगनित मीत हमैं गरीबन को गन॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि मैंने प्रभु से प्रेम किया पर प्रभु को वह अच्छा नहीं लगा। ठीक भी है। मैं तो गरीब हूँ और प्रभु के असंख्य मित्र हैं। और जिनके असंख्य मित्र हैं वह हम गरीबों की ओर क्यों ध्यान देगा।

(६०)

बिन्दु भी सिन्धु समान को अचरज कासों कहैं॥
हेरन हार, हैरान, रहिमन अपुने आपते॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बूंद भी समुद्र के समान होती है यह आश्चर्य कौन किससे कहे। देखने वाला अपने आपको देख कर ही आश्चर्य में पड़ जाता है। भाव यह है कि आत्मा भी परमात्मा के समान ही है और ईश्वर को खोजने वाला उसको अपने आप में ही पाकर आश्चर्य में पड़ जाता है।

(६१)

रन बन व्याधि बिपत्ति में रहिमन मरै न रोय।
जो रच्छक जननी जठर, सो हरि गये कि सोय।

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि युद्ध में (हार जाने पर) वन में रोग में और आपत्ति में बहुत रोना नहीं चाहिए क्योंकि जो ईश्वर माता के गर्भ में स्थित शिशु की रक्षा करता है वह क्या सो गया है? वह अवश्य ही रक्षा करेगा।

(६२)

जो घर ही में घुसि रहे, कदली सुपत सुडील।
तो रहीम तिनते भले पथ के अपत करील॥

अर्थ—जो घर में ही सुन्दर पत्तों वाले और सुडौल केले के वृक्ष घुसकर रहें

तो उनसे अच्छे तो रास्ते के बिना पत्त वाले करील ही हैं।

(६३)

जो पुरुषारथ ते कहूँ, संपति मिलत रहीम।
पेट लागि बैराट घर, तपत रसोई भीम॥

अर्थ—केवल पुरुषार्थ (उद्योग) मात्र करने ही सम्पत्ति प्राप्त नहीं होती—यदि पुरुषार्थ से ही सम्पत्ति मिल जाती तो महापुरुषार्थी भीम केवल अपना पेट भरने के लिये बिराट के घर खाना बनाने वाला रसोइया न बनता।

विशेष—दुर्योधन ने पाण्डवों को ११ वर्ष का बनवास दिया था तथा उसको अंतिम एक वर्ष का अज्ञातवास भी दिया था। अज्ञातवास के लिये ही पाण्डव पुत्र भीम बिराट के घर रसोइया बन कर रहे थे तथा युधिष्ठिर ब्राह्मण बने थे अर्जुन नृत्यकार नकुल ग्वाला और सहदेव सईस बन थे।

(६४)

जो मरजाद चली सदा सोई तौ ठहराय।
जो जल उमगै पार तें सो रहीम बहि जाय॥

अर्थ—जो मर्यादा सदैव रही है वहीं तक जाना ठीक रहता है। पानी यदि किनारे को पार करता है तो बह जाता है।

(६५)

रहिमन कठिन चितान तें, चिता को चित चेत।
चिता दहति निर्जीव को, चिन्ता जीव समेत॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि चिता से भी अधिक चिन्ता कठिन होती है क्योंकि चिता तो मृतक को जलाती है लेकिन चिन्ता जीते जी जलाती है।

(६६)

जो बड़ेन को लघु कहें नहिं रहीम घटि जाहिं।
गिरधर मुरलीधर कहे कछु दुख मानत नाहिं॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि बड़े को छोटा कहने से बड़े का बड़प्पन नहीं घटता क्योंकि गिरधर को मुरलीधर कहने से उनकी महिमा में कमी नहीं होगई।

(६७)

जो रहीम करिबो हुतो ब्रज को इहै हवाल।
तो काहे कर पर धरयो गोवर्धन गोपाल॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि यदि भगवान् श्रीकृष्ण को ब्रज की यही दशा करनी थी ब्रज वासियों को छोड़कर उन्हें दुःख देना था तो फिर क्यों गोवर्धन पर्वत अंगुली पर धारण करके उनकी रक्षा की थी।

(६८)

अंजन दियो तो किरकिरी सुरमा दियो न जाय।
जिन आँखिन सो हरि लख्यो रहिमन बलि-बलि जाय।

अर्थ—जिन आँखों से भगवान् का पुण्य दर्शन किया है और जिनमें उनका वास है उन आँखों में काजल नहीं लगाया जा सकता क्योंकि वे फिर किरकिरी हो जायेंगी। उनमें सुरमा भी नहीं लगाया जा सकता क्योंकि सलाई लगने का भय रहता है। ऐसी आँखों पर रहीम कवि बलिहारी होते हैं।

(६९)

अंतर दाव लगी रहै, धुंआ न प्रगट सोय।
कै जिय जानि आपनो जब सिर बीती होय॥

अर्थ—हृदय के भीतर भगवान के प्रति प्रेम की अग्नि प्रज्वलित रहती है लेकिन यह अग्नि ऐसी विचित्र है कि इसका धुआँ बाहर नहीं दिखाई पड़ता। इस अग्नि का अनुभव तो वह मन ही कर पाता है जिसके सिर पर यह बीत रही है।

(७०)

छोटो काम बड़े करें तो न-बड़ाई होय।
ज्यों रहीम हनुमंत को, गिरधर कहे न कोय॥

अर्थ—यदि छोटे व्यक्ति बड़ा काम करते हैं, तो उनको बड़ाई नहीं मिलती जैसे हनुमान के पहाड़ उठा कर ले आने पर भी उन्हें गिरिधर की पदवी से कोई विभूषित नहीं करता।

विशेष—इसी आशय का दोहा नं० भी देखें।

(७१)

एकै साधे सब सधै सब साधे सब जाय।
रहिमन मूलहिं सींचिबो फूलहि फलहि अघाय॥

अर्थ—एक को ही साधने से सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं और सब को साधने से कोई कार्य सिद्ध नहीं होता। रहीम कवि कहते हैं कि जड़ को ही सींचने से सारा वृक्ष फूलने फलने लगता है उसी प्रकार मुख्य व्यक्ति को वश में करने से सारी कार्य सिद्धियाँ हो जाती हैं।

(७२)

अमृत ऐसे वचन में रहिमन रिस की गाँस।
जैसे मिसिरिहु में मिली निरस बाँस की फाँस॥

अर्थ—अमृत जैसे मीठे वचनों में यदि मन की मलिनता छिपी रहती है तो रहीम कहते हैं कि वह ऐसी ही मालूम पड़ती है जैसे मीठी मिश्री में नीरस बाँस की फाँस।

(७३)

अरज गरज मानैं नहीं रहिमन ए जन चारि।
रिनिया राजा माँगता काम आतुरि नारि॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि उधार देने वाला राजा भिखारी और कामातुर स्त्री—ये चार व्यक्ति मान मर्यादा को भी नहीं मानते और अपना अभिप्राय पूरा करने की निरंतर कोशिश करते हैं।

(७४)

कहि रहीम या जगत से, प्रीति गई है टेरि।
रहि रहीम नर नीच में स्वारथ स्वारथ हेरि॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि इस जगत से प्रीति यह कह कर चली गई है कि अब इस जगत में नीच मनुष्यों के संग में रहकर चारों ओर स्वार्थ ही स्वार्थ दिखाई देगा।

(७५)

एरंड बोड़ रहीम कहि, बेलि सचिक्कन पान।
हस्ती-ढक्का कुल्हड़िन सहैं ते तरुवर आन॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि हे एरंड (अंडी)! तू अपने चिकने पत्तों को

देखकर धोखे में मत पड़ तू अपने को तरुवर समझने की भूल मत कर। क्योंकि तरुवर तो दूसरे ही होते हैं जो हाथियों के आघात और कुल्हाड़ियों की चोट सहन करते हैं।

(७६)

करत निपुनई गुन बिना रहिमन निपुन हजूर।
मानहु टेरत बिटप चढ़ि यहि प्रकार हम कूर ॥

अर्थ—जो मनुष्य बिना किसी गुण के बुद्धिमान व्यक्तियों के समक्ष अपनी बड़ाई करता है ऐसा व्यक्ति कवि रहीम कहते हैं कि स्वयं ही मानो वृक्ष पर चढ़ कर अपनी मूर्खता की घोषणा करता है।

(७७)

कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीत।
बिपति कसौटी जे कसे सोही साँचे मीत ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि सम्पत्ति के साथी तो बहुत से हो जाते हैं वास्तविक साथी की पहिचान तो विपत्ति के समय ही होती है जैसे कि स्वर्ण के खरेपन की पहिचान कसौटी पर कसने पर होती है ऐसे ही सच्चे साथी (मित्र) की पहिचान विपत्ति की कसौटी पर हो जाती है।

(७८)

कहि रहीम धन बढ़ि घटे, जात धनिन की बात।
घट बढ़ उनको कहा घास बेचि जे खात ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि धन के घटने बढ़ने से धनियों की बात जान ली जाती है लेकिन जो घास बेचकर गुजारा कर लेते हैं उनको धन के घटने बढ़ने की चिन्ता नहीं होती।

(७९)

कमला थिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू क्यों न चंचला होय ॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि कमला (लक्ष्मी) कभी स्थिर नहीं रहती

अर्थात् वह कहीं भी स्थायी नहीं होता वह कभी किसी के पास रहता है तो कभी किसी अन्य स्थान पर। वृद्ध विष्णु की पत्नी होने के कारण भला कमला क्यों न चंचला होगी ? अर्थात् जिस प्रकार वृद्ध की पत्नी चंचल स्वभाव की होती है उसी प्रकार लक्ष्मी भी चंचल स्वभाव की होती है।

(८०)

कमला थिर न रहीम कहि लखत अधम जे कोय।
प्रभु की सो अपनी कहै क्यों न फजीहत होय॥

अर्थ—कमला (लक्ष्मी) कभी कहीं स्थिर टिक नहीं पाती ऐसा रहीम कवि कहते हैं। और जो व्यक्ति उसे स्थिर समझते हैं वे अधम हैं। क्योंकि विष्णु भगवान् की स्त्री को जो अपना समझते हैं वे अपनी ही फजीहत कराते हैं क्योंकि विष्णु की पत्नी को अपनी मानना अनुचित है। तात्पर्य यह है कि लक्ष्मी किसी की कभी नहीं होती है इसीलिये उसे चंचल स्वभाव का कहा गया है।

(८१)

जैसी परै सो सहि रहै कहि रहीम यह देह।
धरती ही पर परत है, सीत घाम औ मेह॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि जैसी इस देह पर पड़ती है—सहन करनी चाहिये क्योंकि इसी धरती पर ही शीत धूप और वर्षा पड़ती है अर्थात् जिस प्रकार धरती शीत गर्मी और वर्षा सहन करती है उसी प्रकार शरीर को सुख दुःख सहन करना चाहिये।

(८२)

रहिमन लाख भली करो, अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियत हूँ, साँप सहज धरि खाय॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि लाख भलाई करो किन्तु दुष्ट अपनी दुष्टता नहीं छोड़ता। जिस प्रकार मधुर गीत सुनकर और दूध पीकर भी साँप का मारने का स्वभाव नहीं जाता।

अलंकार—दृष्टान्त।

(८३)

कहु रहीम कैसे निभ बेर केर कर संग ।
वे डोलत रस आपुने उनके फाटत अंग ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि केला और बेर का एक स्थान पर कैसे निर्वाह हो सकता है क्योंकि बेर के साधारण रूप से हिलने डुलने में ही केले के कोमल पत्ते फट जायेंगे अर्थात् दुष्ट और सज्जन का एक साथ निर्वाह कठिन है क्योंकि दुष्ट की साधारण हरकतें ही सज्जन को कष्टकारक हो सकती हैं ।

भावसाम्य—

दुष्ट निकट बसिए नहीं बस न कीजिए बात ।
कदली बेर प्रसंग से छिदे कंटकन पात ॥

—वृन्द सतसई

(८४)

रहिमन ओछे नरन से तजौ बर अरु प्रीति ।
काटे चाटे स्वान के दुहु भाँति बिपरीति ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि नीच मनुष्यों से प्रीति और बैर दोनों ही तजने चाहिये क्योंकि कुत्ते की भाँति उनका काटना और चाटना दोनों ही अनुचित मालूम पड़ते हैं ।

भावसाम्य—

हितहू भलो न नीच को नाहिन भलो अहेत ।
चाट अपावन तन करै, काटि स्वान दुख देत ॥

—वृन्द सतसई

(८५)

बड़े बड़ाई ना करैं बड़े न बोलैं बोल ।
रहिमन हीरा कब कहै लाख टका मेरो मोल ॥

अर्थ—बड़े अपने बड़ाई नहीं करते और न वे कभी बड़ी बातें कहते हैं । रहीम कवि कहते हैं कि हीरा कभी अपनी यह बड़ाई नहीं कहता कि मेरा लाख टका मूल्य है ।

(८६)

बड़े दीन को दुख सुनें, लेत दया उर आनि।
हरि हाथी सों कब हुती कहु रहीम पहचानि॥

अर्थ—बड़े व्यक्ति दीनों का दुख सुनते हैं और उसके दुख से अपने मन में दया का भाव भी लाते हैं। रहीम कवि कहते हैं कि भगवान् विष्णु की गज से कब की पहचान थी जो उसे ग्राह से मुक्ति दिलाई अर्थात् भगवान् का बड़प्पन ही था जो उन्होंने दीन गज की व्यथा पर दया करके बिना पहचान के उसे दुख से मुक्ति दिलाई।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

(८७)

आरत सुनत सरन तुरत गरज मिटाई आनि।
कहि रहीम का दिन हुती हरि हाथी पहचानि॥

अर्थ—आर्त (फरियाद) को सुनते ही द्रवित होकर तुरन्त ही उसका दुख निवारण किया। रहीम कहते हैं कि किस दिन हाथी और हरि की पहचान हुई थी अर्थात् नहीं हुई थी।

(८८)

जे गरीब सों हित करे धनि रहीम ते लोग।
कहा सुदामा बापुरो कृष्ण मिताई जोग॥

अर्थ—जो गरीबों से प्रेम करते हैं, रहीम कवि कहते हैं कि ऐसे लोग धन्य हैं। कहाँ तो बेचारा सुदामा और कहाँ द्वारिका के अधिपति भगवान् श्रीकृष्ण भला सुदामा उनकी मित्रता के योग्य था लेकिन फिर भी भगवान ने सुदामा को मित्र भाव से अपनाया।

विशेष—सुदामा नाम के गरीब ब्राह्मण से श्रीकृष्ण की बचपन में मित्रता थी। इस मित्रता को भगवान् ने बखूबी निभाया। जब श्रीकृष्ण द्वारिका के अधिपति थे तब सुदामा का बड़ा आदर सत्कार किया था और उसे धन सम्पदा दान में दी थी।

(८९)

रहिमन जगत बड़ाई की कूकर की पहिचानि ।
प्रीति करै मुख चाटई बैर करे तन हानि ॥

अर्थ— रहीम कवि कहते हैं कि जगत में प्रशंसा कुत्ते की पहचान जैसी होती है जो प्रीति होने पर मुख से चाटकर शरीर अपवित्र करता है और बैर होने से शरीर को हानि पहुँचाता है ।

विशेष—व्यास कवि के नाम से भी यही दोहा इस प्रकार मिलता है—

व्यास बड़ाई जगत की कूकर की पहिचान ।
प्रीति करे मुख चाटई बैर करे तब हान ॥

(९०)

रहिमन ओछे नरन ते होत बड़े नहिं काम ।
मढ़ो दमामो न बनै सौ चूहे के चाम ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि ओछे आदमियों से बड़े आदमियों के काम वैसे ही सफल नहीं हो पाते जिस प्रकार नगाड़े को सौ चूहों के चमड़े से बनाने में सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती ।

भावसाम्य—कैसे छोटे नरन ते सरत बड़नि के काम ।
मढ़्यो दमामो जात क्यों लै चूहे के चाम ॥

—बिहारी सतसई

(९१)

बड़े बड़ाई नहिं तजैं लघु रहीम इतराइ ।
राइ करौंदा होत है कटहर होत न राइ ॥

अर्थ—बड़े अपना बड़प्पन कभी नहीं तजते चाहे छोटे भले ही इतराने लगें । जैसे राई जैसा छोटा बीज तो फूलकर करौंदा हो जाता है लेकिन कटहल कभी राई के समान छोटा नहीं होता ।

अलंकार—दृष्टान्त ।

(९२)

बसि कुसंग चाहत कुसल यह रहीम अफसोस ।
महिमा घटी समुद्र को रावन बस्यो परोस ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि यह बड़े खेद की बात है कि बुरे संग में रहकर मनुष्य मरना क्या चाहता है। क्योंकि रावण जैसे बुरे व्यक्ति के संग में रहकर समुद्र की भी महिमा घट गई थी।

विशेष—रावण की लंका समुद्र के तट पर बसी हुई थी अतः जब राम सीता को लेने के लिये रावण की लंका की ओर अभियान करने लगे तो उन्होंने समुद्र पर पुल बाँधकर उसे पार किया था। समुद्र को कभी बाँधा नहीं गया लेकिन राम ने उसकी इस महिमा को पुल बाँधकर कम कर दिया।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

भावसाम्य—दुर्जन के संसर्ग ते सज्जन लहत कलेस।
ज्यों दसमुख अपराध ते बन्धन लह्यो जलेस॥

—वृन्द सतसई

(६३)

दीन सबन को लखत है दीनहिं लखै न कोय।
जो रहीम दीनहिं लखै दीनबन्धु सम होय॥

अर्थ—दीन व्यक्ति सबकी ओर निहारता है लेकिन उसकी ओर कोई नहीं देखता अर्थात् उसकी परवाह नहीं करते। रहीम कवि कहते हैं कि जो दीनों का ध्यान करते हैं वे दीनबन्धु अर्थात् देवता के समान होते हैं।

(६४)

रहिमन याचकता गहे, बड़े छोट ह्वै जात।
नारायन हू को भयो बावन आँगुर गात॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि याचक बनने पर बड़े व्यक्ति भी छोटे हो जाते हैं जैसे कि भगवान विष्णु बलि से पृथ्वी माँगने पर बावन अंगुल के बराबर छोटे हो गये थे।

विशेष—राजा बलि असुरों का प्रतापी राजा था। उसने अपने पराक्रम से इन्द्रासन को छीनना चाहा। तत्पश्चात् विष्णु ने इन्द्र को बचाने के लिये वामन का छोटा रूप धारण किया और बलि से तीन पग पृथ्वी दान में माँगी। बलि ने दान देना स्वीकार कर लिया और भगवान् विष्णु ने तीन ही पग में उसके सम्पूर्ण राज्य को नाप लिया।

(६५)

रहिमन माँगत बड़ेन की लघुता होत अनूप ।
बलि मख माँगन को गये धरि बावन को रूप ॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि बड़े व्यक्तियों के माँगने से उनकी लघुता भी निराली हो जाती है। बलि के यज्ञ में विष्णु माँगने गये तो वामन का निराला रूप धारण किया।

(६६)

माँगे घटत रहीम पद, कितौ करो बढ़ि काम ।
तीन पैग बसुधा करो तऊ बावनो नाम ॥

अर्थ—माँगने से सम्मान सदा घटता ही है फिर चाहे कितना ही बड़ा काम क्यों न किया जावे। भगवान् विष्णु ने यद्यपि तीन ही पग में वसुधा को नाप लिया था लेकिन फिर भी बलि से भीख माँगने के कारण उनका नाम सदा के लिये वामन (भिखारी) ही रह गया।

भावसाम्य—सबते लघु है माँगिबो जामे फेर न सार।
बलि पै जाँचत ही भये बावन तन करतार ॥

—वृन्द सतसई

(६७)

रहिमन कबहुँ बड़ेन के नाहिं गर्ब कर लेस।
भार धरे संसार को तऊ कहावत सेस ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि बड़े लोगों को जरा भी घमंड नहीं होता। सम्पूर्ण पृथ्वी का भार उठाने वाले शेषनाग भी अपना नाम शेष अर्थात् बचा हुआ रखते हैं।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

(६८)

रहिमन देखि बड़ेन को लघु न दीजिए डारि।
जहाँ काम आवै सुई कहा करै तरवारि ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि बड़ी वस्तु के पीछे छोटी वस्तु को नहीं फेंक

ना चाहिए क्योंकि जहाँ छोटी सी सुई काम आती है वहाँ तलवार बेचारी क्या कर सकती है।

अलंकार—दृष्टान्त।

(९९)

आप न काहू काम के डार पात फल मूर।
औरन को रोकत फिरैं रहिमन कूर बबूर॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि दुष्ट व्यक्ति बबूल के पेड़ की भाँति होते हैं जो न तो स्वयं किसी काम का होता है और न ही अपने पास के पेड़ों का भला करता है बल्कि अपने पास के पेड़ों को भी काँटों से घेर कर दुख पहुँचाता है।

(१००)

खीरा को सिर काटि के, मलियत लौन लगाय।
रहिमन करुये मुखन को चहिए यही सजाय॥

अर्थ—खीरे का कड़ुआपन दूर करने के लिये उसके उसके ऊपरी सिरे को काटकर नमक लगाया जाता है। रहीम कहते हैं कि कड़वे मुँह वालों के लिये यही सजा ठीक है।

(१०१)

धूर धरत नित सीस पैं, कहु रहीम केहि काज।
जेहि रज मुनि पत्नी तरी, सो ढूंढ़त गजराज॥

अर्थ—हाथी सदैव ही अपने सिर पर धूल डालता है अतएव रहीम कहते हैं कि वह ऐसा क्यों करता है फिर वह उसका उत्तर भी देते हुए कहते हैं कि गजराज वह रज खोजता है जिससे गौतम मुनि की स्त्री अहिल्या तर गई थी—इस प्रकार वह भी अपने उद्धार की कामना से रज को अपने सिर पर डालता रहता है।

विशेष—अहिल्या गौतम ऋषि की पत्नी थीं। उनके चरित्र पर सन्देह होने के कारण गौतम ने उसे शाप दे दिया था कि तू पाषाण हो जा। साथ ही यह भी कह दिया था कि भगवान् राम के चरणों की रज के स्पर्श से ही

तेरी मुक्ति होगी। अहिल्या शापवश पत्थर हो गई और जब भगवान राम जनकपुरी जा रहे थे तो राम के चरणों की धूल का स्पर्श पाकर उसकी मुक्ति हो गई थी।

(१०२)

जो रहीम भावी कतौ होति आपने हाथ।
राम न जाते हरिन सग सीय न रावन साथ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि भावी (होनहार) कहीं अपने हाथ में होती है अर्थात् नहीं होती। न राम यदि हरिन के पीछे जाते और न ही माता सीता रावण के साथ जा पातीं।

(१०३)

सब कोऊ सबसों करें राम जुहार सलाम।
हित अनहित तब जानिये जा दिन अटके काम॥

अर्थ—सब लोग जब आपस में मिलते हैं तो स्नेह-प्रदर्शन के लिये राम राम सलाम और जुहार करते हैं लेकिन मित्र और मैत्री का पता तो तब चलता है जब कोई काम आ अटकता है अतः जो उस काम में आकर हाथ बटावे—वही मित्र कहा जाता है।

(१०४)

दुरदिन परे रहीम कहि भूलत सब पहिचानि।
सोच नहीं वित हानि को, जो न होय हित हानि॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बुरे दिनों में जान पहचान वाले लोग भी भूल जाते हैं—यह बात ही दुःख का कारण है। धन की हानि तो मनुष्य को दुःखी नहीं करती यदि उसके हित की हानि न हो।

विशेष—कहा जाता है कि उपर्युक्त दोहा रहीम ने गंग कवि के निम्न दोहे के उत्तर में लिख भेजा था—

सीखे कहाँ नवाब जू, ऐसी दीने दैन।
ज्यों ज्यों कर ऊँचो करो त्यों-त्यों नीचे नैन॥

(१०५)

रहिमन नीच प्रसंग ते नित प्रति लाभ विकार।
नीर चोरावत संपुटी मार सहत घरियार॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि नीचों के साथ से हानि उठानी पड़ती है क्योंकि पानी तो चुराता है कटोरी का पाप लेकिन मार सहन करनी पड़ती है बेचारे घड़ियाल (घण्टा) को।

(१०६)

सीत हरत तम हरत नित भुवन भरत नहिं चूक।
रहिमन तेहि रवि को कहा जो घटि लखै उलूक॥

अर्थ—सूर्य शीत का निवारण करता है अन्धकार को दूर करता है और उसका प्रकाश सब स्थानों में फैलता है—ऐसे यशस्वी सूर्य को यदि उल्लू कम करके देखता है तो उससे सूर्य की महत्ता कम नहीं हो जाती।

भावसाम्य—मूरख मन समझै नहीं तो न गुनी में चूक।
कहा भयो दिन को बिगो, देखी जो न उलूक॥

(१०७)

रहिमन वहाँ न जाइये जहाँ कपट को हेत।
हम तन ढारत ढेकुली सींचत अपनो खेत॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि वहाँ नहीं जाना चाहिए जहाँ कपट व्यवहार हो क्योंकि हम तो मेहनत करके कुएँ से ढेकुली द्वारा पानी खींचें और कपटी मनुष्य बिना श्रम के अपना खेत सींच लाते हैं।

(१०८)

उरग तुरंग नारी, नृपति, नीच जाति हथियार।
रहिमन इन्हें सम्हारिये, पलटत लगै न बार॥

अर्थ—सर्प घोड़ा स्त्री राजा नीच कुल के मनुष्य और हथियार को सदा सम्हाल कर रखना चाहिये क्योंकि थोड़ी सी भी ढील देने पर इन्हें पलटते देर नहीं लगती।

(१०९)

जो रहीम ओछो बढ़ तो अति ही इतराय ।
प्यादे से फरजी भयो टेढ़ो टेढ़ो जाय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि ओछा व्यक्ति यदि उन्नति कर जाता है तो घमंड में बुरी तरह फूला-फूला फिरता है जैसे कि शतरंज में प्यादा फरजी बनने पर टेढ़ी चाल चलने लगता है ।

(११०)

रहिमन नीचन संग बसि, लगत कलंक न काहि ।
दूध कलारिन हाथ लखि, सब समुझहि मद ताहि ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि नीच व्यक्तियों का संग करने से भला किसे कलंक नहीं लगता । शराब बेचने वाली के हाथ में दूध देख कर सब लोग उसे शराब ही समझते हैं ।

अलंकार—दृष्टान्त ।

(१११)

रहिमन उजली प्रकृति को, नहीं नीच को संग ।
करिया बासन कर गहे कालिख लागत अंग ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि उज्ज्वल प्रकृति के मनुष्यों के लिए नीच व्यक्तियों का संग उचित नहीं होता क्योंकि काले बरतनों को हाथ में लेने से कालिख अवश्य अंग को लग जाती है ।

भावसाम्य—'महमद' तज्यो गंवार ज्यों छोटे को संग साथ ।
सीरो कर कारो करै, तातो जारे हाथ ॥

(११२)

रहिमन जो तुम कहत हो संगति ही गुन होय ।
बीच उखारी रसभरा, रस काहे ना होय ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि यदि संगति मात्र करने से ही गुण आ जाता तो गन्नों के बीच उगने वाले रसभरी पौधों मे रस क्यों नहीं होता—वह क्यों सब से गुण रस से विहीन रह जाता है ।

(११३)

रहिमन भरिया रहँट की, त्यों ओछे की डीठ।
रीतिहि सममुख होत है भरी दिखावे पीठ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जिस प्रकार रहट का घड़ा खाली होकर सामने आता है और भरा होने पर पीठ दिखा देता है उसी प्रकार ओछा आदमी भी गरीबी होने पर ही सामने आता है लेकिन धनी हो जाने पर हमेशा पीठ ही दिखाता है अर्थात् बात भी नहीं करता।

भाव साम्य—हरिवंस अरहट की घरी ज्यों कुमीत की रीत।
जब खाली तब सममुखी जब संभर तब पीठ॥

(११४)

छोटनि सों सोहैं बड़े, कहि रहीम यह रेख।
सहसन को हय बाँधियत लै दमरी की मेख॥

अर्थ—छोटों से बड़े भी शोभित होते हैं—यह पत्थर पर लिखी रेखा के समान निश्चित बात है क्योंकि हजारों रुपये की कीमत का घोड़ा दमड़ी (दस कौड़ी) की खूँटी से बँधा रहता है।

(११५)

ए रहीम दर दर फिरहिं, माँगि मधुकरी खाहिं।
यारों यारी छोड़िए, वे रहीम अब नाहिं॥

अर्थ—विपत्ति में अब दरवाजे दरवाजे भोजन की भीख के लिये फिरना पड़ता है। रहीम कवि कहते हैं कि अब दोस्ती का भरोसा मत करो क्योंकि बुरे वक्त में काम आने वाले दोस्त अब नहीं रहे।

अन्य अर्थ यह भी हो सकता है—

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं विपत्ति काल होने के कारण अब हमें द्वार-द्वार पर भटकना पड़ा रहा है और भिक्षा से जीवनयापन करना पड़ रहा है। अब मित्रों को हमारी मित्रता को छोड़ देना चाहिए क्योंकि अब हम पहले जैसे सामर्थ्यवान् नहीं रहे जो किसी मित्र की सहायता कर सकें।

(११६)

प्रथम बचन ते को फस्यो, बैठि ताड़ की छाँह।
रहिमन काम न आय है ये नीरस जग माँह।

अर्थ—बुरे बचन बोलने वाला ऐसा कौन है जो उन्नति करता है। वे ताड़ के पेड़ के समान होते हैं जिसकी छाया का कोई सुख नहीं ले पाता। ऐसे व्यक्ति ताड़ के वृक्ष की भाँति किसी काम नहीं आ पाते न तो उनकी छाया का कोई लाभ उठा पाता है और न ही उसके फल होते हैं जिससे किसी प्राणी की क्षुधा तृप्त हो सके।

(११७)

असमय परे रहीम कहि, माँग जात तजि लाज।
ज्यों लछमन माँगन गए पारासर के नाज॥

अर्थ—बुरे दिनों में रहीम कवि कहते हैं लज्जा को त्याग कर किसी के घर माँगना पड़ता है जैसे लक्ष्मण को दुर्दिनों में पारासर ऋषि के घर नाज माँगने जाना पड़ा था।

(११८)

धनि रहीम जल पङ्क को, लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है, जगत पियासो जाय॥

अर्थ—पंक का वह जल धन्यवाद का पात्र है जिसमें से छोटे जीव पेट भर कर पीते हैं। भला उस समुद्र की क्या बड़ाई जहाँ से सारा संसार प्यासा लौट कर आता है।

भावसाम्य— दाता लघुरपि सेव्यो भवति न कृपणो महानपि।
कूपोऽन्तः स्वादुजलः प्रीत्यै लोकस्य न समुद्रः॥

—पंचतंत्र

(११९)

कौन बड़ाई जलधि मिलि, गंग नाम भो धीम।
केहि की प्रभुता नहिं घटी पर घर गए रहीम॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि कौन ऐसा है जिसका दूसरे के घर जाने

पर बड़प्पन न घटा हो। गंगा इतनी बड़ी और महिमाशाली नदी है लेकिन सागर में जाने पर उसकी महिमा भी घट जाती है अर्थात् सागर में मिल कर उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

(१२०)

सरस बढ़यो उद्यम घट्यो, नृपति निठुर मन कीन।
कहु रहीम कैसे जिए, थोरे जल की मीन॥

अर्थ—श्रम बढ़ गया है और उद्यम घट गया है तथा राजा ने भी निष्ठुर मन कर लिया है। रहीम कवि कहते हैं कि ऐसी स्थिति में जीना उसी प्रकार कठिन है जिस प्रकार थोड़े से जल में मछली का जीना कठिन होता है।

(१२१)

जैसी जाकी बुद्धि है, तैसी कहै बनाय।
ताको बुरा न मानिये, लैन कहाँ सूँ जाय॥

अर्थ—जैसी जिसकी बुद्धि होती है वैसा ही वह बनता है। अल्प बुद्धि वालों की बात का बुरा नहीं मानना चाहिए क्योंकि उनसे लेना ही क्या होता है।

(१२२)

जिहि अंचल दीपक दुरयो, हन्यो सो ताही गात।
रहिमन असमय के परे मित्र शत्रु ह्वै जात॥

अर्थ—जिस साड़ी के अंचल की ओट में दीपक को छिपा कर स्त्री पवन से उसकी रक्षा करती है उसी अंचल को दीपक जला देता है। रहीम कवि कहते हैं कि बुरे दिनों में तो मित्र भी इसी प्रकार शत्रु हो जाते हैं।

(१२३)

दोनों रहिमन एक से, जौ लौं बोलत नाँहि।
जान परत हैं काक पिक ऋतु बसंत के माँहि॥

अर्थ—कौआ और कोयल दोनों एक समान होते हैं—जब तक वे नहीं बोलते तब तक इनकी पहिचान नहीं हो पाती लेकिन बसंत ऋतु जब आती है तो कोयल की मधुर आवाज से दोनों में अंतर स्पष्ट हो जाता है।

सादृश्य—भले बुरे सब एक से ज्यों लौं बोलत नाँहि।
जान परत है काक पिक, ऋतु बसंत के माँहि ॥—वृन्द सतसई

(१२४)

धन थोरो इज्जत बड़ी, कहि रहीम का बात।
जैसे कुल की कुल बधू चिथड़न माँहि समात ॥

अर्थ—धन यदि थोड़ा है लेकिन इज्जत बहुत है तो रहीम कवि कहते हैं कि यह कोई हेय बात नहीं है। सम्मानित कुल की कुलबधू अपने मान की रक्षा तो चिथड़ों में भी कर लेती है।

(१२५)

देनहार कोउ और है भेजत सो दिन रैन।
लोग भरम हम प करें, याते नीचे नैन ॥

प्रसंग—प्रस्तुत दोहा कवि रहीम ने अकबरी दरबार के अन्य प्रसिद्ध कवि गंग के इस दोहे के उत्तर में लिखा था—

"सीखे कहाँ नवाब जू, ऐसी देनी देन।
ज्यों-ज्यों कर ऊँचे करो त्यों-त्यों नीचे नैन ॥

अर्थ—देने वाला तो कोई और है (अर्थात् भगवान है) जो दिन रात देने के लिये भेजा करता है लेकिन लोग भ्रम वश मुझे देने वाला समझते हैं चूँकि यूँ ही मुझे देने वाला कहा जाता है अतः मेरी दृष्टि संकोचवश नीचे झुकी रहती है।

(१२६)

रहिमन अँसुवा नयन ढरि, जिय दुख प्रगट करेइ।
जाहि निकारो गेह ते कस न भेद कहि देइ ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि आँसू नयनों से ढरक कर मन का दुख प्रकट कर देते हैं जिसको भी घर से निकालते हैं वह घर का भेद दूसरों से कह ही देता है।

(१२७)

रहिमन अपने गोत को सबै चहत उत्साहु।
मृग उछरत आकास को, भूमी खनत बराहु ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अपने वंश की वृद्धि को सब कोई चाहते हैं। मृग चन्द्रमा के वाहन हैं इसलिये वे पृथ्वी पर रहते हुए भी आकाश की ओर उछलते हैं। और चूँकि भगवान् वाराह हिरण्याक्ष को मारकर पातालोक से पृथ्वीलोक को लाये थे इसीलिये सूअर (वाराह) भूमि को खोदते हैं। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक प्राणी अपने-अपने वंश और जाति के अनुसार काम करता है।

(१२८)

रहिमन अबके बिरछ कहँ, जिनकी छाँह गँभीर।
बागन बिच-बिच देखियत सेंहुड़ कुंज करीर॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अब वे पेड़ नहीं होते जिनकी छाया घनी होती थी अब तो हर बाग में कटीले सेंहुड़ कांटेदार झाड़ी कुंज और करील ही देखने को मिलते हैं।

(१२९)

ऊगत जाही किरन सों अथवत ताही कांति।
त्यों रहीम सुख दुख सबै, बढ़त एक ही भाँति॥

अर्थ—जिन किरणों से सूर्य और चन्द्र उगते हैं उन्हीं किरणों से अस्त हो जाते हैं, रहीम कवि कहते हैं कि इसी प्रकार सुख-दुख एक ही समान बढ़ते हैं।

(१३०)

यों रहीम सुख दुख सहत बड़े लोग सह सांति।
उवत चन्द जेहि भाँति सों, अथवत ताही भाँति॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बड़े लोग उसी प्रकार समान भाव से सुख दुख को सहन करते हैं जिस प्रकार चन्द्र जैसे उगता है उसी भाँति अस्त भी हो जाता है।

(१३१)

यह रहीम मानै नहीं दिल से नवा न होय।
चीता चोर कमान के नए ते अवगुन होय॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि चीता चोर, कमान नम्र होने पर भी

तिष वे नम्र नहीं होते क्योंकि चीता जब नम्र होकर झुकता है तो वह आक्रमण करने के लिये उछलता है चोर भी नम्र होकर धनहानि करता है और कमान भी झुकने पर ही तीर फेंक कर प्राण हानि करती है अतः इन तीनों का नम्र होना (झुकना) दिखावटी होता है और हानिप्रद होता है।

भावसाम्य—नमन नमन बहु अंतरा नमन-नमन बहु बान।
ये तीनों बहुते नवें चीता चोर, कमान॥

और भी— सज्जन नवते जानि गनहु जो डर दुख न होई।
चीता चोर कमान ज्यों नवहिं आपनी गोई॥

(१३२)

याते जान्यों मन भयो, जरि जरि भस्म बनाय।
रहिमन जाहि लगाइए सो रूखो ह्वै जाय॥

अर्थ—मेरा मन शायद इसीलिये जल कर भस्म हो गया है क्योंकि जिसे भी इससे लगाता हूँ वही रूखा हो जाता है।

(१३३)

रहिमन जिह्वा बावरी कहिगे सरग पताल।
आपु तो कहि भीतर रही जूती खात कपाल॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि यह जिह्वा (जबान) तो बावली होती है। यह तो स्वर्ग और पाताल तक की उल्टी सीधी बातें बक जाती है लेकिन आप तो कह कर मुख के भीतर हो जाती है और जूते खाने पड़ते हैं सिर को।

(१३४)

रहिमन जो रहिबो चहै, कहै वाहि के दाव।
जो बासर को निसि कहै, तो कचपची दिखाव॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि यदि चैन से रहना चाहते हो तो मालिक की हाँ में हाँ मिलाओ। यदि मालिक दिन को रात बताये तो तुम उसके समर्थन में आकाश में तारे और दिखा दो।

भावसाम्य—आठ गहे भूमि आठमी यही पाँच में रहबो।
ऊट बिलाइ ले गई, तो हाँजी-हाँजी कहबो॥

(१९५)

रहिमन तब लगि ठहरिए, दान मान सनमान।
घटत मान देखिय जबहिं, तुरतहि करिय पयान ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि उसी समय तक रहना चाहिये जब तक कि दान मान और सम्मान रहे। और जब भी मान घटता दीखे तो तुरन्त ही वहाँ से चल देना चाहिये।

(१९६)

रहिमन रहिवो वा भलो जौ लौं सील समूच।
सील ढील जब देखिए, तुरत कीजिए कूच ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि रहना तभी समय तक उचित है जब तक कि पूरा सम्मान बना रहे और जब सम्मान पर आँच आये तो वहाँ से तुरन्त ही प्रस्थान कर देना चाहिये।

(१९७)

रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरै मोती मानुस चून ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि पानी अवश्य ही रखना चाहिये क्योंकि पानी के बिना सब सूना हो जाता है अर्थात् व्यर्थ हो जाता है। पानी चले जाने से पुन मूल्य नहीं रह जाता क्योंकि यदि मोती का पानी (उसकी आब या कान्ति) चली गई तो वह बेकार हो जाता है। इसी प्रकार मनुष्य के पानी (आत्म-सम्मान) चला गया तो वह प्रतिष्ठाहीन मनुष्य भी दो कौड़ी का रह जाता है और ऐसे ही यदि चूने में से पानी (जल) जाता है तो चूना बेकार हो जाता है।

(१९८)

संतत के मारिहु गए, औगुन पुन न सराहि।
ज्यों रहीम बाघहु बधे मरहा तु अधिकाहि ॥

अर्थ—नीच व्यक्तियों के मरने पर भी उनके अवगुणों का उत्पात कम नहीं होता। जिस प्रकार कि बाघ द्वारा मारे गये मनुष्य की आत्मा मनुष्य रूपी बाघ का रूप धारण कर अधिक उत्पात मचाती है।

विशेष—जो मनुष्य बाघ द्वारा मारा जाता है उसके लिये एक चबूतरा निर्मित करके उसकी आत्मा की पूजा की जाती है क्योंकि उसकी आत्मा दूसरे जन्म में मनुष्य भक्षी बाघ का रूप धारण कर अधिक उत्पात मचाती है।

(१३९)

रहिमन खोटी आदि को सो परिनाम लखाय।
जैसे दीपक तम भखै, कज्जल वमन कराय॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि यदि प्रारम्भ बुरा है तो अन्त में उसका नतीजा भी बुरा होता है जैसे दीपक शुरू में अन्धकार का भक्षण करता है तो अन्त में वह काजल का ही वमन करता है अर्थात् काजल ही छोड़ता है।

(१४०)

मुकता कर, करपूर कर, चातक जीवन जोय।
ये तो बड़ो रहीम जल ब्याल-बदन विष होय॥

अर्थ—स्वाति नक्षत्र का जल महत्वपूर्ण होता है क्योंकि सीपी में वह मोती बनता है, केले में कपूर बनता है चातक का जीवनदायक होता है लेकिन सर्प के मुख में पड़ कर विष हो जाता है।

(१४१)

कदली सीप भुजंग-मुख स्वाति एक गुण तीन।
जैसी संगति बैठिये, तैसोई फल दीन॥

अर्थ—स्वाति नक्षत्र का पानी तो एक ही होता है लेकिन तीन स्थानों पर अपने तीन गुण प्रकट करता है। केले के पत्ते पर स्वाति नक्षत्र का जल कपूर बनता है, सीप के मुख में पड़ने से मोती बनता है तो सर्प के मुख में पड़ने से वही विष बन जाता है। जैसी संगति में बैठा जाता है वैसा ही फल मिलता है।

विशेष—(१) ऐसा प्रसिद्ध है कि स्वाति नक्षत्र का जल केले पर गिरने से कपूर सीपी के मुख में गिरने से मोती और सर्प के मुख में गिरने से जहर बन जाता है।

(२) सूरदास ने इसी भाव के साम्य पर लिखा है—

सीप भयो मुक्ता भयो कदली भयो कपूर ।
अहिमुख भयो तो विष भयो संगत के फल सूर ॥

(१४२)

मूढ़ मण्डली में सुजन, ठहरत नहीं विसेषि ।
स्याम कंचन में सेत ज्यों दूरि कीजियत देखि ॥

अर्थ—मूर्खों की मण्डली में सज्जन नहीं टिकपाते जैसे कि काले बालों में से सफेद बाल को निकाल दिया जाता है ।

(१४३)

भलो भयो घर तै छुट्यो हस्यो सीस परि खेत ।
काके काके नवत हम, अपन पेट के हेत ॥

अर्थ—युद्ध भूमि में धड़ से कटकर गिरा हुआ सिर मानो इसलिये हँसता है कि चलो छुट्टी मिली अब पेट के खातिर सबके सामने झुकना तो न पड़ेगा ।

(१४४)

भीत गिरी पखान की अररानो वहि ठाम ।
अब रहीम धोखो यहै को लागै केहि काम ॥

अर्थ—पत्थरों की दीवार गिरी तो धरनि की आवाज में गिरा हुआ पत्थर कहता है कि अब कौन सा पत्थर कहाँ काम आवेगा । क्योंकि सभी पत्थर तो अब अलग हो जायेंगे ।

(१४५)

भूप गनत लघु गुनिन को, गुनी गनत लघु भूप ।
रहिमन गिरि ते भूमि लों लखौं तो एक रूप ॥

अर्थ—राजा गुणवान् मनुष्यों को अपने समक्ष छोटा मानता है जबकि गुणवान मनुष्य राजा को छोटा समझते हैं । रहीम कवि कहते हैं कि पर्वत से धरती तक कोई भी बड़ा-छोटा नहीं है—सभी को समान समझना चाहिये ।

(१४६)

बिगरी बात बनै नहीं लाख करौ किन कोय ।
रहिमन फाटे दूध को मथे न माखन होय ॥

अर्थ—बात जब एक बार बिगड़ जाती है तो फिर नहीं बनती चाहे लाख उपाय बाद में किये जायें। रहीम कवि कहते हैं कि दूध के एक बार फट जाने से फिर कितना भी उसे मथा जाये उससे मक्खन नहीं निकाला जा सकता।

(१४७)

यद्यपि अवनि अनेक हैं कूपवंत सरितास।
रहिमन मानसरोवरहि मनसा करत मरास॥

अर्थ—यद्यपि पृथ्वी पर अनेक गहरे जल के कुण्ड और झीलें हैं लेकिन हंस तो मानसरोवर में ही अपनी इच्छा से क्रीड़ा करना पसंद करता है।

भावसाम्य— जदपि अनेक सुख तोम तामु रसताम।
संतत तुलसी मानसर, तदपि न तजहिं मराल॥

—तुलसी

(१४८)

मानसरोवर ही मिले हंसनि मुक्ता भोग।
सफरिन भरे रहीम सर बक-बालक नहिं जोग॥

अर्थ—मानसरोवर मे ही हंसों को मुक्ता चुगने को मिलते हैं—अर्थात् मानस में ही संत लोग मुक्ति को खोजते हैं सरोवरों में तो छोटी मछलियाँ भी रहती हैं जो बगुलों के बच्चों के खाने के लिये ही रहती हैं अर्थात् सांसारिक विषयों में तो तुच्छ बुद्धि के लोग ही लिप्त रहते हैं।

(१४९)

रहिमन निज मन की बिथा मनही राखो गोय।
सुनि अठिलैहैं लोग सब बाँटि न लैहै कोय॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि अपने मन की व्यथा को मन के भीतर ही छिपा कर रखना चाहिये क्योंकि व्यथा को सुनकर लोग इठला भले ही लें—उसे बाँट कर कम करने वाला कोई नहीं होता।

(१५०)

रहिमन निज सम्पति बिना कोउ न बिपति सहाय।
बिनु पानी ज्यों जलज को, नहिं रवि सकै बचाय॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि पास में पैसा न रहने पर कोई भी विपत्ति में सहायता नहीं करता। सूर्य जो कमल को खिलाता है—पानी न होने पर वहीं कमल को सुखा डालता है।

(१५१)

जब लगि वित्त न आपुने तब लगि मित्र न कोय।
रहिमन अंबुज अंबु बिनु, रवि नाहिन हित होय॥

अर्थ—जब तक अपने पास धन नहीं है तब तक कोई मित्र नहीं होता क्योंकि कमल को विकसित करने वाला सूर्य भी पानी के सूख जाने पर उन्हें सुखा डालता है।

भावसाम्य— कुसमय मीत काको कमन।
कमल को रवि परम हित है कहत श्रुति सब बयन।
घटत वारिन भयो वाकयो करत कमलन दहन।

—सूर

(१५२)

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं लपटे रहत भुजंग॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जो अच्छे स्वभाव के मनुष्य होते हैं उनको बुरी संगति भी बिगाड़ नहीं पाती क्योंकि जहरीले सर्प चन्दन के वृक्षों से लिपटे रहने पर भी उस पर कोई जहरीला प्रभाव नहीं डाल पाते।

(१५३)

जो रहीम गति दीप की कुल कपूत गति सोय। /
बारे उजियारो लगे, बढ़े अँधेरो होय॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि दीपक और कुपुत्र से एक ही दशा होती है। दीपक जब जलता है और कुपुत्र बाल्यावस्था में होता है तो प्रकाश फैलाता है (बाल्यावस्था में कुपुत्र भी प्रसन्नता प्रदान करता है) लेकिन जैसे ही दीपक बढ़ता है (बुझता है) और कुपुत्र बढ़ता है (बड़ा होता है) तो अन्धकार फैलाता है अर्थात् अपयश फैलाता है फलतः माता पिता को निराश होना पड़ता है।

(१२४)

जो रहीम गति दीप की, सुत सपूत की सोय।
बड़े उजेरो तेहि रहे, गए अँधेरो होय॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि दीप की भाँति ही सपूत की भी स्थिति होती है क्योंकि जैसे दीपक प्रज्वलित होने पर आह्लादकारक होता है वैसे ही सुपुत्र बड़ा होने के साथ-साथ माता-पिता के लिये प्रसन्नता का कारण होता है। और दीपक और सुपुत्र दोनों ही के चले जाने से (समाप्त हो जाने से) अन्धकार अर्थात् दुःख छा जाता है।

(१२५)

रहिमन करि सम बल नहीं मानत प्रभु की धाक।
दाँत दिखावत दीन ह्वै चलत घिसावत नाक॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि हाथी के समान शक्तिशाली और कोई नहीं है लेकिन वह शक्तिशाली हाथी भी प्रभु का सम्मान करता है। इसीलिए वह उनके समक्ष दाँत दिखा कर अपनी दीनता का प्रदर्शन करता है और सूंड़ को धरती से सटाकर चलने से मानो नाक रगड़ता हुआ चलता है।

(१२६)

रहिमन कहत सुपेट सों, क्यों न भयो तू पीठ।
रीते अनरीते करें, भरे बिगारत दीठ॥

अर्थ—रहीम कवि पेट को सम्बोधित कर कहते हैं कि यह पीठ क्यों न हो गया क्योंकि खाली होने पर तो यह पाप करवाने को आमादा होगया और पेट भरा होने पर यह नजर को बिगाड़ने वाला अर्थात् बदमाशी करने पर उतारू हो गया।

(१२७)

रहिमन अपने पेट सों, बहुत कह्यो समुझाय।
जो तू अनखाए रहे, तो सों को अनखाय॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अपने पेट से मैंने बहुत समझा कर कहा कि तू यदि बिना भोजन करे रहेगा तो तू अकुलायेगा।

(१२८)

कैसे निबहै निबल जन, करि सबलन सों बैर।
रहिमन बसि सागर विषें, करत मगर सों बैर॥

अर्थ—निर्बल मनुष्य सबल मनुष्यों से शत्रुता नहीं करनी चाहिये क्योंकि रहीम कवि कहते हैं कि सागर में रह कर मगर से बैर निभ नहीं सकता।

(१२९)

काज परे कछु और है, काज सरे कछु और।
रहिमन भँवरी के भए नदी सिरावत मौर॥

अर्थ—काम पड़ने पर वस्तु का मूल्य अधिक होता है और काम निकल जाने पर उसी वस्तु का मूल्य कुछ और हो जाता है रहीम कवि कहते हैं कि विवाह की भाँवरों के समय तो मौर को सिर पर रखकर आदर दिया जाता है और काम निकल जाने पर उसे नदी में बहा दिया जाता है।

(१३०)

काहु कामरी पामड़ी, जाड़ गए से काज।
रहिमन भूख बुताइये, कैस्यो मिलै अनाज॥

अर्थ—कम्बल हो या रेशमी बहुमूल्य कपड़ा—इससे क्या बनता-बिगड़ता है काम तो जाड़ा निकालने से है। रहीम कवि कहते हैं कि अनाज कीमती हो या सस्ता इससे क्या? मुख्य बात तो भूख का शान्त करना है। जो भूख किसी भी प्रकार के अनाज से मिट सकती है।

(१३१)

छिमा बड़न को चाहिए, छोटिन को उत्पात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात॥

अर्थ—बड़ों को क्षमा करना शोभा देता है और छोटों को उत्पात मचाना। रहीम कवि कहते हैं कि भगवान विष्णु का इसमें क्या घट गया जो भृगु ब्राह्मण ने उनके वक्षस्थल पर लात मारी।

विशेष—ऐसा पौराणिक उपाख्यान है कि एक बार भृगु ने ब्रह्मा विष्णु

और महेश की सहनशक्ता और धैर्य की परीक्षा लेनी चाही। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर उन्होंने क्षीर सागर में शेषनाग की शय्या पर सोये हुए भगवान् विष्णु के छाती पर लात मार कर जगाना चाहा। भगवान् लात लगने से जग पड़े और भृगु की इस ऐसी हरकत पर बजाय गुस्सा होने के बड़ी विनम्रता और परिताप से भृगु के चरणों को दबाते हुए बोले—'भगवन् मेरे कठोर वक्षस्थल से आपके कोमल चरणों में चोट आगई होगी अतः मैं इसे दबा दूं।' भृगु को भगवान् की धैर्यशीलता तथा बड़प्पन का पूर्ण परिचय मिल गया।

(१५२)

खैर, खून, खाँसी, खुसी, बैर, प्रीति, मदपान।
रहिमन दाबे न दबै, जानत सकल जहान॥

अर्थ—कुशलता खून खाँसी प्रसन्नता शत्रुता प्रेम और शराब का पीना दबाने से भी नहीं दबता है अर्थात् प्रकट हो ही जाता है और संसार के सभी लोग जान लेते हैं।

(१५३)

रहिमन दुरदिन के परे, बड़ेन किए घटि काज।
पाँच रूप पांडव भए, रथवाहक नलराज॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बुरे दिनों में बड़े व्यक्तियों ने भी छोटे काम किये हैं। पाँच पांडवों ने अपने बुरे दिनों में पृथक्-पृथक् रूप धारण कर राजा विराट के यहाँ नौकरी की तथा राजा नल ने राजा ऋतुपर्ण के सारथी बने।

विशेष—पाँचों पांडव जूए में हार जाने पर अज्ञात वास किया था और राजा विराट के यहाँ अलग-अलग वेष धारण करके नौकरी की थी। इसी प्रकार राजा नल जूए में सब कुछ हार गये और अपनी पत्नी दमयंती को छोड़ कर राजा ऋतुपर्ण के रथ के हाँकने वाले सारथी बने।

(१५४)

कोउ रहीम जनि काहु के द्वार गए पछिताय।
संपति के सब जात हैं बिपति सबै लै जाय॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि किसी के द्वार पर जाने से पछताना नहीं

चाहिये क्योंकि भगवान् के पास तो सभी जाते हैं और मनुष्य को विपत्ति कहीं नहीं ले जाती अर्थात् विपत्ति में तो भटकना ही पड़ता है।

(१९५)

होय न जाकी छाँह ढिग फल रहीम अति दूर।
बाढ़हू सो बिनु काज ही जैसे तार खजूर ॥

अर्थ—जिसकी छाया पास में नहीं होती और फल भी बहुत दूर होते हैं ऐसे ताड़ और खजूर के वृक्षों का बढ़ना व्यर्थ ही होता है क्योंकि प्राणी न तो उसकी छाया से शीतलता ग्रहण कर पाते हैं और न ही उनके फलों से क्षुधा की तृप्ति कर पाते हैं ? रहीम का तात्पर्य ऐसे मनुष्यों से है जो माने तो बड़े जाते हैं लेकिन उनसे किसी भी मनुष्य को लाभ या सहायता प्राप्त नहीं होती इसलिए उनका कोई महत्व नहीं होता।

अलङ्कार—अन्योक्ति

(१९६)

मनसिज माली की उपज कही रहीम नहि जाय।
फल स्यामा के उर लगे, फूल स्याम उर आय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि कामदेव रूपी माली की उपज के बारे में कुछ कहना कठिन है क्योंकि फूल तो श्याम के हृदय में उपजते हैं अर्थात् काम का आनन्द श्याम के हृदय में उमड़ता है और फल श्याम के हृदय पर लगता है अर्थात् काम को उद्दीप्त करने वाले स्तनों का उदय श्यामा (नायिका) के वक्षस्थल पर होता है।

भावसाम्य— रोमावलि कोमल लता नाभी थिय के आल।
कुचफल देखत पीय के अंग अंग फूलत जात ॥
—जसवंत सिंह

(१९७)

रहिमन प्रीति न कीजिए, जस खीरा ने कीन।
ऊपर से तो दिल मिला भीतर फाँकें तीन ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं ऐसी प्रीति मत कीजिए जैसी कि खीरा ने की

जिसका चित्र (चित्त) तो ऊपर से मिला हुआ दीखता है लेकिन भीतर तीन फाँके फूटी हुई होती हैं।

(१६८)

अनकीन्हीं बातें करै, सोवत जागै जोय।
ताहि सिखाय जगायबो रहिमन उचित न होय॥

अर्थ—जो न कहने योग्य बात करें तथा जो जागते हुए भी सोते रहते हैं अर्थात् जानबूझकर अज्ञान में पड़े रहना चाहते हैं रहीम कहते हैं कि ऐसे व्यक्तियों को सीख देना तथा जगाना उचित नहीं रहता।

भावसाम्य—

(१) समुझि सुरीति कुरीति रत जागत ही रह सोय।
उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होय॥

—तुलसी

(२) जानबूझ अजुगत करै, तासों कहा बसाय।
जागत ही सोवत रहे, कौन ताहि जगाय॥

—वृन्द

(१६९)

अनुचित वचन न मानिए, जदपि गुरायसु गाढ़ि।
है रहीम रघुनाथ तें सुजस भरत को बाढ़ि॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अनुचित बात को कभी स्वीकार नहीं करना चाहिये चाहे वह गुरु द्वारा दी गई कठिन आज्ञा क्यों न हो। श्री रामचन्द्र जी ने पिता का वचन पालन कर वनवास लिया लेकिन उनके छोटे भाई भरत ने गुरुजनों की आज्ञा न मानकर राज्य ग्रहण नहीं किया तो भरत के इस त्याग राम के त्याग से कम नहीं बताया जाता।

(१७०)

अब रहीम मुसकिल पड़ी, गाढ़े दोऊ काम।
साँचे से तो जग नहीं झूठे मिलें न राम॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अब बड़ी कठिन परिस्थिति हो गई है क्योंकि दोनों ही काम कठिन हैं क्योंकि यदि सत्य पर चलता है ... है

होना कठिन है और सत्संग का सहारा मिला तो है तो राम की प्राप्ति (सद्गति) कठिन है।

(१७१)

अनुचित उचित रहीम लघु करहिं बड़न के जोर।
ज्यों ससि के संयोग ते पचवत आग चकोर॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि यदि छोटे अनुचित कर्म करते हैं तो बड़ों का सहारा लेकर ही। क्योंकि चकोर (जो छोटा है) चन्द्र (जो बड़ा है) के रूप पर मुग्ध होकर ही अंगारे खा जाता है।

(१७२)

आवत काज रहीम कहि गाढ़े बन्धु सनेह।
जीरन होत न पेड़ ज्यों, थामे बरै बरेह॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि समय पर पुराने मित्रों का स्नेह ही काम आता है जैसे कि वट वृक्ष की शाखायें भूमि में धँस कर वृक्ष की जड़ें बन जाती हैं और इस प्रकार उसकी रक्षा करती रहती हैं।

(१७३)

सर सूखे पच्छी उड़ै औरे सरन समाहिं।
दीन मीन बिन पच्छ के कहु रहीम कहँ जाहिं॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब एक सरोवर का जल सूख जाता है तो पक्षी उड़ कर दूसरे सरोवर की शरण में चले जाते हैं किन्तु बेचारी मछलियों के तो पंख नहीं होते बताओ वे कहाँ जायें?

(१७४)

हित रहीम इतऊ करैं जाकी जहाँ बिसात।
नहिं यह रहै न वह रहै रहै कहन को बात॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं जिस मनुष्य की जितनी शक्ति है उसको उतना ही परोपकार करना चाहिए क्योंकि संसार में यह या वह कोई वस्तु नहीं रह जाती केवल कहने के लिए बात रह जाती है कि अमुक ने कितना उपकार किया या कितना अपकार किया था।

(१७२)

यों रहीम गति बड़ेन की ज्यों तुरंग व्यवहार।
दागु दिवावत आपु तन सही होत असवार॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि घोड़ा अपने गरम लोहे से अंक दगवा लेता है और सवार का चिन्ह बन जाता है। जिस प्रकार घोड़े का यह व्यवहार है उसी प्रकार का व्यवहार बड़े लोग करते हैं। वे दूसरों का उपकार करने के लिए स्वयं कष्ट सहन कर लेते हैं।

विशेष—कहा जाता है कि अकबर के शासन काल में एक प्रथा चलाई गई थी। घुड़सवार सेना मे सवार का जो नंबर होता था वह लोहा गरम करके घोड़े के शरीर पर दाग दिया जाता था। इस प्रकार नंबर तो सवार का पड़ता था पर कष्ट घोड़े को सहन करना होता था।

(१७६)

रहिमन अती न कीजिये, गहि रहिए निज कानि।
सैंजन अति फूले तऊ डार पात की हानि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि किसी भी काम में सीमा से अधिक नहीं बढ़ना चाहिए अपनी मर्यादा का पालन करते रहना चाहिए जैसे सहजनी के वृक्ष में जब फूल लगते हैं तो अत्यधिक मात्रा में लगते हैं और इससे उसे पत्तों और डालियों की हानि सहनी पड़ती है और फिर उसके सारे ही पत्ते झड़ जाते हैं।

(१७०)

करम हीन रहिमन लखो धस्यो बड़े घर चोर।
चिन्तत ही बड़ लाभ के जागत ह्वै गो भोर॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि देखो भाग्य-हीन चोर धनी के घर में चोरी के लिए घुसा पर वह इस विचार में ही पड़ा रहा कि किस वस्तु की चोरी से बड़ा लाभ होगा। यह विचार करते करते ही प्रातः काल हो गया।

विशेष—सूर ने भी इस प्रकार का भाव नैनों के सम्बन्ध में व्यक्त किया है—

यों सूली ज्यों चोर मरे, पर चोरी मिटि न जाई।
बदनाम चोर भयो पछितानो कर तें छाँडि दई॥

(१७८

कहि रहीम इक दीप तें प्रगट सबै दुति होय।
तन सनेह कैसे दुरै दृग दीपक जरु दोय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि एक ही दीपक से सब ओर प्रकाश हो जाता है। तब शरीर में प्रेम कैसे छिपा रह सकता है क्योंकि यहाँ तो नेत्र रूपी दो दीपक जल रहे हैं।

भावसाम्य—तुलना कीजिए—

"प्रेम दुराये ना दुरै नैना देहिं बताय।

(१७९)

कहु रहीम कैसे बनै अनहोनी ह्वै जाय।
मिला रहै औ ना मिलै तासों कहा बसाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब कोई अनहोनी घटना घटित हो जाती है तो किसी का कार्य कैसे सिद्ध हो सकता है। कोई अभीष्ट वस्तु हमको प्राप्त हो अथवा न हो दोनों पर हमारा वश नहीं चलता।

भावसाम्य—संस्कृत की भी एक सूक्ति है—

अवश्यम्भाविनो भावा भवन्ति महतामपि।

(१८०)

कागद को सो पूतरा सहजहि में घुल जाय।
रहिमन यह अचरज लखो सोऊ खैंचत बाय॥

अर्थ—यह शरीर कागज से बने हुए पुतले के समान है जो शीघ्र ही घुल जाता है। रहीम जी कहते हैं कि एक आश्चर्य देखो कि कागज के पुतले के समान होने पर भी यह शरीर श्वास लेता है।

भावसाम्य—तुलना कीजिए—

कौन भरोसा देह का छाँड़हु जतन उपाय।
[illegible]

(१८१)

कैसे निबहै निबल जन करि सबलन सों बैर ।
रहिमन बसि सागर विषे करत मगर सों बैर ॥

अर्थ—निर्बल व्यक्ति यदि शक्तिशाली व्यक्ति से शत्रुता रखे तो कैसे निभाव हो सकता है। रहीम कवि कहते हैं कि सागर में रहकर दुर्दान्त मगर से बैर नहीं किया जा सकता क्योंकि परिणाम प्राणान्तक हो सकता है।

(१८२)

काम न काहू आवई मोल रहीम न लेइ ।
बाजू टूटे बाज को साहब चारा देइ ॥

अर्थ—कवि ने इस दोहे में बताया है कि जिसका कोई नहीं होता उसका रक्षक ईश्वर होता है क्योंकि जब बाज का पंख टूट जाता है तो वह किसी काम का नहीं रहता। उस अवस्था में उसको कोई नहीं खरीदता फिर भी ईश्वर ही उसको भोजन प्रदान करता है।

(१८३)

कुटिलन संग रहीम कहि साधू बचते नाहिं ।
ज्यों नैना सैना करें उरज उमैठी जाहिं ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बताइए दुष्ट पुरुषों के साथ रह कर सज्जन पुरुष भी कैसे बच सकते हैं ? उन्हें भी कष्ट भोगना ही पड़ता है। जैसे नैन तो तिरछी निगाह से प्रहार करते हैं और फल उरोजों को भोगना पड़ता है क्योंकि उनको प्रिय मसलकर कष्ट देता है।

भावसाम्य—इसका भावसाम्य निम्न दोहे में देखा जा सकता है—

क्यों बसिए क्यों निबहिये नीति नेह पुर नाहिं ।
लगा लगी लोयना करें नाहक मन बँध जाहिं ॥

(१८४)

खैंचि चढ़नि ढीली ढरनि कहहु कौन यह प्रीति ।
आज काल मोहन गही, बंस दिया की रीति ॥

अर्थ—आज कल श्रीकृष्ण ने कार्तिक मास में बाँस पर लटकाए जाने वाले

(१९२)

जो रहीम दीपक दसा, तिय राखत पट-ओट।
समय परे से होत है वाही पट की चोट॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि स्त्री दीपक को अपने आँचल की ओट में रखती है पर समय आकर वही आँचल पर चोट कर बैठता है अर्थात् बुझा देता है। दुष्ट पुरुषों का भी यही स्वभाव होता है।

भावसाम्य—

जिहि अंचल दीपक दुर्यो हन्यो सो ताही गात।
रहिमन असमय के परे, मित्र शत्रु ह्वै जात॥

—रहीम

(१९३)

जो रहीम पगतर परो, रगरि नाक अरु सीस।
निठुरा आगे रोयबो, आँसु गारिबो खीस॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि निष्ठुर व्यक्ति के सामने अपना दुखड़ा रोना और आँसू बहाना व्यर्थ होता है भले ही तुम नाक रगड़ कर और सिर झुका कर उसके पैरों में पड़ो।

(१९४)

तब ही लों जीबो भलो दीबो होय न धीम।
जग में रहिबो कुचलि मति उचित न होय रहीम॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि जीवित रहना तभी तक अच्छा है जब तक दान देने की शक्ति कम न हो। संसार में अनुचित रीति से रहना ठीक नहीं।

(१९५)

तरुवर फल नहिं खात हैं सरवर पियहिं न पान।
कहि रहीम पर काज हित संपति संचहि सुजान॥

अर्थ—वृक्ष स्वयं फल नहीं खाते और सरोवर जल नहीं पीते। रहीम जी कहते हैं कि सज्जन लोग संपत्ति का संग्रह तो परोपकार के लिए ही करते हैं।

भावसाम्य—संस्कृत के निम्नश्लोक से इस दोहे के भाव की पूर्ण समता है।

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः
पयोमुचाम्भः क्वचिदस्ति पार्श्वं
परोपकाराय सतां विभूतयः ॥

(१९६)

तें रहीम अब कौन है एती खैंचत बाय।
जस कागद को पूतरा नमी माँहि घुल जाय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यह शरीर तृण और कागज से बने पुतले के समान है जो नमी पाते ही घुलकर नष्ट हो जाता है लेकिन यह स्वास लेने वाला जीव आखिर कौन है ? समझ में नहीं आता।

(१९७)

थोथे बादर क्वार के, ज्यों रहीम घहरात।
धनी पुरुष निर्धन भए, करें पाछिली बात ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि क्वार मास के खाली बादल जिस प्रकार घुमड़ते हैं उसी प्रकार धनी मनुष्य निर्धन होने पर अपने पिछले दिनों की ही बातें करते हैं।

(१९८)

थोरो कियो बड़ेन की बड़ी बड़ाई होय ।
ज्यों रहीम हनुमंत को, गिरधर कहत न कोय ॥

अर्थ—थोड़ा सा भी बड़प्पन का कार्य करने पर बड़ों की प्रशंसा हो जाती है जैसे श्रीकृष्ण ने तो पर्वत को केवल धारण ही किया था तो भी उनका नाम गिरिधर हो गया और हनुमान पर्वत को बहुत दूर तक उठा कर ले गए फिर भी उनको कोई गिरिधर नहीं कहता।

(१९९)

दादुर मोर किसान मन, लग्यो रहै घन माहि।
रहिमन चातक रटनि हू सरवर को कोउ नाहि ॥

अर्थ—मेंढक मयूर और किसान इन सभी का मन बादल की ओर सदा

रहता है कि कब वर्षा हो। चातक भी मेघ का नाम रटता है। पर चातक की समानता करने वाला कोई नहीं।

भावसाम्य—तुलना कीजिए—

'मुख मीठे मानस मलिन कोकिल मोर चकोर।
सुयस धवल चातक नवल रह्यो भुवन भरि तोर॥"—तुलसी

(२००)

दीरघ दोहा अरथ के आखर थोरे आहिं।
ज्यों रहीम नट कुंडली सिमिटि कूदि चढ़ि जाहिं॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि दोहे में अर्थ तो पर्याप्त लम्बा होता है पर अक्षर थोड़े ही होते हैं जैसे पूरे आकार का नट अपने शरीर को समेट कर फिर कूद कर छोटे से गोले में से निकल जाता है।

विशेष—(१) अनेक नट इस प्रकार का खेल दिखाया करते हैं। उनके पास एक लोहे की पत्ती आदि का छोटा सा चक्र होता है। उसको कुछ ऊँचाई पर खड़ा कर दिया जाता है और पूरे आकार का नट उसमें होकर दूसरी ओर कूद जाता है।

(२) दोहे के अर्थ लाघव की बात बिहारी के बारे में भी इसी प्रकार कही जाती है—

देखन में छोटो लगे घाव करे गंभीर।

(२०१)

धरती की सी रीति है सीत घाम औ मेह।
जैसी परै सो सहि रहै त्यों रहीम यह देह॥

अर्थ—पृथ्वी की यह रीति है कि वह सर्दी धूप और वर्षा जो भी पड़ती है उसे सहन कर लेती है। रहीम जी कहते हैं कि उसी प्रकार इस शरीर को भी जो कुछ सुख दुख आए उसे सहन कर लेना चाहिए।

विशेष—रहीम जी ने अन्यत्र भी लिखा है—

'जैसी परे सो सहि रहे कहि रहीम यह देह।

(२०२)

नहि रहीम कुछ रूप गुन नहीं मृगया अनुराग ।
देसी स्वान जो राखिये भ्रमत भूख ही लाग ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि देसी कुत्ता पाला जाय तो उसमें न तो कोई सुन्दर रूप अथवा गुण ही होता है और न उसे शिकार करने से ही कोई लगाव होता है। वह तो बस घूमते हुए भौंकता ही रहता है।

(२०३)

नात नेह दूरी भली, जो रहीम जिय जानि ।
निकट निरादर होत है ज्यों गड़ही को पानि ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि इस बात को हृदय में भली भाँति समझ लेना चाहिए कि सम्बन्धियों तथा स्नेहियों से दूर पर रहना ही अच्छा है। पास रहने पर उनका गड़ही के जल के समान ही निरादर होने लगता है।

(२०४)

नाद रीझि तन देत मृग नर धन हेत समेत ।
ते रहीम पशु ते अधिक, रीझेहु कछु न देत ॥

अर्थ—संगीत पर मुग्ध होकर हरिण अपना शरीर अर्पित कर देता है, मुग्ध होकर मनुष्य अपना धन और ममत्व न्योछावर कर देता है। वे लोग तो पशु से भी बढ़कर हैं जो रीझने पर भी कुछ नहीं देते।

(२ ५)

निज कर क्रिया रहीम कहि सिधि भावी के हाथ ।
पाँसे अपने हाथ में दाँव न अपने हाथ ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि अपने हाथ में तो केवल कर्म करना ही होता है सिद्धि देना दैव के अधीन है। चौपड़ आदि खेलते समय पाँसे तो अपने हाथ में रहते हैं पर दाँव क्या आएगा वह अपने हाथ में नहीं होता।

विशेष—इस दोहे में स्पष्ट रूप से गीता के ज्ञान का उपदेश किया गया है जैसा भगवद्गीता में कहा है—

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।'

(२०६)

मैन सलौने अधर मधु कहि रहीम घटि कौन।
मीठो भाव लौन पर अरु मीठे पर लौन॥

अर्थ—नैन सलौने (लावण्ययुक्त नमकीन) हैं और अधर मधुर (मीठे) हैं। रहीम जी कहते हैं कि इनमें भला कौन सा कम है ? क्योंकि नमकीन के पश्चात मीठा अच्छा लगता है और मीठे के पश्चात् नमकीन।

(२०७)

पन्नग बेलि पतिव्रता रिति सम सुनो सुजान।
हिम रहीम बेली दही सत जोजन दहियान॥

अर्थ—हे सज्जनो सुनो पान की बेल और पतिव्रता स्त्री इन दोनों की रीति समान होती है। पान की बेल को पाला जला देता है और दूर पर पति के वियोग से पतिव्रता नारी जल जाती है।

(२०८)

परि रहिबो मरिबो भलो सहिबो कठिन कलेश।
बामन ह्वै बलि को छल्यो भलो दियो उपदेश॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि दूसरे के यहाँ रहकर दुख सहन करने से तो उसका मरना ही अच्छा है। भगवान ने बलि को वामन का रूप धारण कर, छल करके ठीक ही उपदेश दिया।

(२०९)

पात-पात को सींचिबो बरी-बरी को लौन।
रहिमन ऐसी बुद्धि को कहो बरैगो कौन॥

अर्थ—वृक्ष की उन्नति के लिए जड़ को सींचना चाहिए और दाल को पीस कर बनाई जाने वाली बड़ियों को नमकीन बनाने के लिए पिसी हुई दाल में नमक मिलाना चाहिए। किन्तु जो व्यक्ति जड़ के स्थान पर पत्ते को सींचता है और दाल के स्थान पर प्रत्येक बड़ी में नमक मिलाता है उसकी बुद्धि की प्रशंसा कौन करेगा ?

(२१०)

पावस देखि रहीम मन, कोइल साधे मौन।
अब दादुर बक्ता भए, हमको पूछत कौन॥

अर्थ—वर्षा ऋतु को देखकर कोयल तथा रहीम के मन ने मौन साध लिया है। अब तो मेंढक ही बोलने वाले हैं। हमारी तो कोई बात ही नहीं पूछता। अभिप्राय यह है कि कुछ अवसर ऐसे आते हैं जब गुणियों को चुप रह जाना पड़ता है उनका कोई आदर नहीं करता और गुणहीन वाचाल व्यक्तियों का ही बोलबाला हो जाता है।

(२११)

पुरुष पूजैं देवरों, तिय पूजैं रघुनाथ।
कहि रहीम दोउन बनै पड़ो बैल के साथ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि पुरुष तो भूत-प्रेतों की पूजा करते हैं और स्त्रियाँ भगवान् राम को पूजती हैं। पुरुषों और स्त्रियों का साथ ऐसा लगता है जैसे पड़ों (भैंस के बच्चों) तथा बैलों का साथ हो।

(२१२)

फरजी साह न ह्वै सकै गति टेढ़ी तासीर।
रहिमन सीधे चाल सों प्यादो होत वजीर॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि शतरंज के खेल में वजीर का मोहरा बादशाह नहीं बन सकता क्योंकि उसका टेढ़ा चलने का स्वभाव होता है। परन्तु सिपाही का मोहरा सीधा चलते चलते वजीर के घर में पहुँच जाता है तो वजीर बन जाता है।

विशेष—(१) शतरंज में वजीर की चाल टेढ़ी होती है। सिपाही सीधा चलता है। जब अपनी ओर का वजीर पिट जाता है और सिपाही सीधा चलते चलते दूसरी ओर के वजीर के घर में पहुँच जाता है तो वजीर बन जाता है।

(२) यहाँ रहीम जी ने टेढ़ी चाल की हानि तथा सीधी गति का लाभ बताया है।

(२१३)

बड़ माया को दोष यह जो कबहूँ घट जाय।
तो रहीम मरिबो भलो दुख सहि जिए बलाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि धन का यह एक बहुत बड़ा दोष है कि जब यह कम हो जाता है तो जीवन से मृत्यु अच्छी रहती है। दुखों को सहते हुए जीवित रहने में बड़ी आपत्ति होती है।

साम्यता - 'मृच्छकटिक नाटक' का वाक्य भी यही कहता है—

सुखात्तु यो याति नरो दरिद्रता।
धृत शरीरेण मृत स जीवति॥

(२१४)

दुरदिन परे रहीम कहि दुरथल जैयत भागि।
ठाढ़े हूजत घूर पर जब घर लागत आगि॥

अर्थ- रहीम कवि कहते हैं कि बुरे दिनों में तो किसी बुरे स्थान में जाकर भी आश्रय लिया जा सकता है क्योंकि जब घर में आग लग जाती है तो आग से बचने के लिए कूड़ा घर में जाकर बचाव करना बुद्धिमानी ही समझी जाती है।

(२१५)

बड़े पेट के भरन को है रहीम दुख बाढ़ि।
याते हाथिहि हहरि कै दिये दाँत द्वै काढ़ि॥

अर्थ—हाथी के बाहर दीखने वाले दाँतों को देखकर रहीम जी कहते हैं कि बड़े पेट को भरने में दुख भी होता है। इसीलिए हाथी ने गिड़गिड़ा कर दो दाँत निकाल दिए हैं।

विशेष— दाँत दिखाना या 'दाँत निपोरना' दीनता प्रदर्शन के लिए प्रयोग किया जाता है।

(२१६)

बढ़त रहीम धनाढ्य धन धनौ धनी को जाय।
घटै बढ़ै वाको कहा भीख माँगि जो खाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि धनवान मनुष्यों का ही धन बढ़ता है और

बलवान मनुष्यों का ही धन घटता है। जो नित्य प्रति भीख मांग कर खाता है जिसके पास धन है ही नहीं उसका क्या घटेगा बढ़ेगा ?

(२१७)

भावी या उनमान की पाँडव बनहि रहीम।
तदपि गौरि सुन बाँझ है बरु है संभु अजीम ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि होनहार इतनी प्रबल होती है कि उसने पाण्डवों को भी वन में भेज दिया। यद्यपि महादेव पार्वती जी के पति है फिर भी पार्वती बन्ध्या ही है, ऐसा सुना जाता है।

विशेष—जब युधिष्ठिर जुए में अपने सम्पूर्ण राज्य को अपने चारों भाइयों यहाँ तक कि अपनी पत्नी द्रोपदी को भी हार गए तो उनको एक और पाँसा फेंकने का अवसर दिया गया जिसमे शर्त रखी गई कि यदि युधिष्ठिर हार जाते हैं तो द्रोपदी तथा चारों भाइयों सहित उनको बारह वर्ष वन मे रहना होगा और तब एक वर्ष अज्ञात वास करना होगा। यदि वह जीत जाते हैं तो उन्हें तत्काल उनका सम्पूर्ण राज्य दे दिया जायगा। किन्तु इस दाँव को भी युधिष्ठिर हार गए। फलस्वरूप उन्होंने बारह वर्ष वन में तथा एक वर्ष अज्ञात वास में व्यतीत किए।

(२१८)

मन सों कहा रहीम प्रभु दृग सों कहा दिवान।
देखि दृगन जो आदरैं, मन तेहि हाथ बिकान ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि मन के समान राजा और नेत्रों के समान मन्त्री और कहाँ मिल सकते हैं। जिस प्रकार राजा मंत्री की सलाह से कार्य करता है उसी प्रकार नेत्र जिसको देखकर आदर देते हैं मन भी उसी के हाथ बिक जाता है।

(२१९)

महि नभ सर पंजर कियो रहिमन बल अवसेष।
सो अर्जुन बैराट घर रहे नारि के भेष ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस अपार बलशाली अर्जुन ने बाणरूप वाह

के समय पृथ्वी और आकाश को बाणों से ढक दिया था वहीं अर्जुन को राजा विराट् के यहाँ स्त्री के वेश में रहना पड़ा।

विशेष—(१) जब श्रीकृष्ण की अनुमति से अग्नि-देव खाण्डव वन को जला रहा था तो इन्द्र ने उसको बुझाने के लिए वर्षा की। परन्तु अर्जुन ने बाणों से पृथ्वी और आकाश को इस प्रकार आच्छादित कर दिया कि उसमें से पानी प्रवेश नहीं कर सका और अग्नि ने अपना कार्य पूर्ण कर लिया।

(२) जब जुए में हारने के पश्चात् पाण्डव बारह वर्ष वन में व्यतीत कर चुके तो उन्होंने एक वर्ष का अज्ञात वास का समय बिताने के लिए विराट् के घर रहने का निश्चय किया। युधिष्ठिर ने राजा को जुए में सहायता देने वाला कार्य लिया भीमसेन ने रसोइये का रूप धारण किया अर्जुन ने बृहन्नला के रूप में विराट की कन्या को नृत्य शिक्षा देने का कार्य धार लिया। एक बार इन्द्र की सभा में उर्वशी को निराश कर देने के कारण उर्वशी से अर्जुन को एक वर्ष पुरुषत्व के गुणों से हीन होने का शाप मिला था। अर्जुन ने उस शाप की ही शक्ति से एक वर्ष के लिए नारी का वेश धारण किया और विराट के यहाँ रहे।

(२२)

मान सहित विष खाइ कै संभु भए जगदीस।
बिना मान अमृत पियें, राहु कटायो सीस॥

अर्थ—सागर-मन्थन से निकले हुए विष को भी सम्मान सहित पी कर शिव जी जगदीश के नाम से विख्यात हुए पर बिना सम्मान के अमृत पीने पर भी राहु को अपना सिर कटाना पड़ा।

विशेष—(१) समुद्र में देवता और दानवों के सम्मिलित प्रयास से समुद्र मथा गया। उससे चौदह रत्न निकले। उनमें से विष भी था। विष से सारा संसार जलने लगा। तब देवता की प्रार्थना पर भगवान शिव ने जगत के कल्याण के लिए विष को पीकर कण्ठ में धारण कर लिया। अतएव वह जगदीश कहलाए।

(२) जब अमृत के लिए देव-दानव झगड़ने लगे तो भगवान विष्णु ने मोहिनी का वेश धारण कर देवता और दानवों को

को पहले अमृत पिलाया। राहु देवता का रूप धारण करके देवताओं की पंक्ति में जा मिला। था। सूर्य तथा चन्द्रमा ने जो उसके बगल में थे चुगली की तो विष्णु ने चक्र से राहु का सिर काट दिया। अमृत पी लेने से वह अमर हो चुका था। अतः धड़ राहु तथा सिर केतु कहलाया।

(२२१)

यह रहीम निज संग लै जनमत जगत न कोय।
बैर, प्रीति अभ्यास जस होत होत ही होय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यश तथा प्रेम अभ्यास और कीर्ति इनको साथ लेकर कोई प्राणी संसार में उत्पन्न नहीं होता। ये सब तो धीरे धीरे ही होते हैं।

(२२२)

रहिमन असमय के परे, हित अनहित ह्वै जाय।
बधिक बधै मृग बान सों रुधिर देत बताय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बुरा समय आने पर हितकर वस्तु भी अहितकर हो जाती है। जैसे बहेलिया बाण से हरिण को मारता है, तो उसके के भाग जाने पर घाव से बहने वाले हरिण के स्वयं के रक्त से हरिण का स्थान पता लग जाता है।

(२२३)

रहिमन आँटा के लगे बाजत है दिन राति।
घिउ शक्कर जे खात हैं; तिनको कहा बिसात॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब मुख पर आटा मले जाने पर निर्जीव मृदङ्ग या ढोलक रात-दिन बजती रहती है तब घी और शक्कर खाने वाले मनुष्य की तो बात ही क्या है। उसको तो खिलाने वाले की प्रशंसा करनी ही पड़ती है।

(२२४)

रहिमन कुटिल कुठार ज्यों, करि डारत द्वै टूक।
चतुरन के कसकत रहै समय चूक की हूक॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं जिस प्रकार कठोर कुल्हाड़ी लकड़ी के दो टुकड़े

कर डालती है उसी प्रकार अवसर निकल जाने का पछतावा चतुर मनुष्यों के हृदय को कष्ट देता रहता है।

(२२५)

रहिमन चुप ह्वै बैठिये देखि दिनन को फेर।
जब नीके दिन आइ हैं बनति न लगि है बेर॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बुरे दिनों का चक्कर आने पर चुप होकर बैठ रहना चाहिए क्योंकि जब अच्छे दिन आएँगे तो बिगड़े काम बनने में देर नहीं लगेगी।

(२२६)

रहिमन जग जीवन बड़े काहू न देखे नैन।
जाय दसानन अछत ही कपि लागे गथ लेन॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि इस संसार में किसी व्यक्ति ने अपने ही जीवन में बड़प्पन प्राप्त नहीं किया। जैसे रावण के जीते जी बन्दरों ने उसकी सम्पत्ति (लंका) को लूट लिया।

(२२७)

रहिमन जाके बाप को पानी पियत न कोय।
ताकी गैल अकाश लौं क्यों न कालिमा होय॥

अर्थ—समुद्र के ऊपर उठते हुए काले-काले बादलों को देखकर रहीमजी कहते हैं—बादल का पिता समुद्र है। समुद्र का कोई पानी भी नहीं पीता तब भला बादल का मार्ग भी आकाश तक काला क्यो नहीं हो जायगा। जिस व्यक्ति के पिता का लोग तिरस्कार करते हैं जिसके यहाँ का पानी भी नहीं पीते उस व्यक्ति का मार्ग (जीवन) तो अन्धकारपूर्ण हो ही जाता है।

(२२८)

रहिमन ठठरी धूरि की रही पवन ते पूरि।
गांठ युक्ति की खुलि गई रही धूरि की धूरि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यह शरीर धूलि की गठरी के समान है। इसमें हवा भरी हुई है। जब ईश्वर द्वारा बाँधी हुई प्राण की गाँठ खुल जाती

यह पुनः धूल के कण में पड़ी रह जाती है। प्राणहीन हो जाने से अधिक नहीं रहता।

(२२९)

रहिमन तीन प्रकार ते हित-अनहित पहिचानि।
परबस परे परोस बस परे मामिला जानि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि हमारे हित चिन्तकों और अहित चिन्तकों की पहिचान तीन अवस्थाओं में होती है—दूसरों के वश में पड़ जाने पर, पड़ोस में रहने पर और कोई काम पड़ने पर (अथवा मुकदमा आदि लगने पर)। इन तीन अवस्थाओं में हमारे सच्चे हितकारी ही प्राय सहायक होते हैं।

(२३०)

रहिमन थोरे दिनन को कौन करै मुख स्याह।
नहीं छलन को पर तिया नहीं करन को ब्याह॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यह जीवन थोड़े दिन का और है। इन थोड़े दिनों के लिए इस खेड़ बातों में विवाद आदि लगाकर कौन मुंह काला करे, न तो किसी दूसरे की स्त्री को छलना ही है और न अब अपना विवाह ही करना है। पर स्त्री को छलने के लिए अथवा विवाह करने के लिए ही बातों का काला होना आवश्यक होता है।

(२३१)

रहिमन दानि दरिद्रतर, तऊ जाँचिबे जोग।
ज्यों सरितन सूखा परे कुआ खनावत लोग॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि दानी चाहे बहुत दरिद्र ही क्यों न हो उससे माँगना उचित ही होता है। जैसे यद्यपि नदी और कुआ दोनों ही जल का दान करते हैं नदी बड़ी होती है और कुआ छोटा होता है फिर भी नदी के सूख जाने पर लोग कुँआ खुदवाते हैं।

(२३२)

रहिमन पर-उपकार के करत न यारी बीच।
माँस दियो शिवि भूप ने, दीन्हो हाड़ दधीचि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि परोपकारी व्यक्ति पर-उपकार करते समय मोह माया नहीं करता। राजा शिवि ने परोपकार के लिए अपने ही शरीर का मांस दे दिया था और महर्षि दधीच ने देवताओं के उपकार के लिए अपने शरीर की हड्डियाँ तक दे दी थीं।

विशेष—(१) जब राजा शिवि दानवीर बन कर चुके तो इन्द्र अपने इन्द्रासन के लिए सशंक हो उठा। अग्नि ने कबूतर तथा इन्द्र ने बाज का रूप धारण किया और शिवि के यहाँ गए। भयभीत हो कबूतर शिवि की गोद में आ गिरा। बाज ने अपने भक्ष्य को लौटाने का आग्रह किया। राजा ने कबूतर के बराबर अपना मांस देने का निश्चय किया और अपना अंग काट-काट कर तराजू पर चढ़ाने लगे। कम रहने पर तुला पर स्वयं चढ़ गए और जब अपना सिर काटकर देने लगे तभी भगवान प्रकट हुए और उन्होंने शिव को अपना धाम दे दिया।

(२) जब वृत्रासुर को देवता लोग किसी प्रकार नहीं जीत सके तो विष्णु से उन्होंने वर प्राप्त किया कि दधीच की हड्डियों से बने वज्र से वृत्रासुर को मारा जा सकेगा। तब दधीच ने अपने शरीर की हड्डियाँ सहर्ष देवताओं को दे दीं। उनसे बने वज्र से वृत्रासुर को मारा जा सका।

(२१३)

रहिमन बहु भेषज करत ब्याधि न छाँड़त साथ।
खग मृग बसत अरोग बन हरि अनाथ के नाथ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि ईश्वर तो असहायों के स्वामी हैं मनुष्य तो अनेक प्रकार की चिकित्सा करते हैं फिर भी रोग उनका साथ नहीं छोड़ते परन्तु वन में पशु और पक्षी नीरोग बन कर निवास करते हैं।

(२१४)

रहिमन बात अगम्य की, कहनि सुनन की नाहि।
जे जानति ते कहति नहि कहत ते जानति नाहि॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि अगम्य ब्रह्म की बात न तो कही जा सकती है और न सुनी जा सकती है। जो लोग उसको जानते हैं वे उसका बखान नहीं करते और जो उसकी चर्चा करते हैं वे उसको जानते नहीं।

(२१५)

रहिमन बिगरी आदि की बनै न खरचे दाम।
हरि बाढ़े आकाश लौं तऊ बावनै नाम॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जो बात आरम्भ में बिगड़ जाती है, वह फिर धन व्यय करके भी नहीं बन सकती। राजा बलि को छलने के लिए वामन का रूप धारण करने वाले भगवान यद्यपि छल के समय आकाश तक बढ़ गए तथापि उनको वामन के नाम से ही पुकारा जाता है।

विशेष—जब राजा बलि अनेक यज्ञ कर चुके तो इन्द्र चिन्तित हुआ। भगवान विष्णु उसकी चिन्ता दूर करने के लिए बौने संन्यासी के वेश में बलि के समीप गए और तीन पैर पृथ्वी माँगी। बलि के देने के लिए तत्पर होने पर उन्होंने अपना आकार बहुत बड़ा किया। उन्होंने एक पैर से पृथ्वी और दूसरे से आकाश नाप लिया। तीसरे पैर में बलि के शरीर को नाप कर उसे पाताल का राजा बना दिया। इस प्रकार विशाल आकार धारण कर लेने पर भी 'वामन' नाम से ही प्रसिद्ध हुए।

(२१६)

रहिमन भेषज के किए काल जीति जो जात।
बड़े-बड़े समरथ भये तौ न कोऊ मरि जात॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि चिकित्सा करने से ही मृत्यु पर विजय प्राप्त की जा सकती तो जो बड़े बड़े समर्थ व्यक्ति हुए हैं वे तो नहीं मर सकते थे फिर क्यों मर गये।

(२१७)

रहिमन यह तन सूप है लीजै जगत पछोर।
हलुकन को उड़ि जान दे गरुए राखि बटोर॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि मानव शरीर सूप के समान है। इससे संसार भली भाँति फटक कर देख लेना चाहिए। जिस प्रकार सूप भूसा आदि हल्की वस्तुओं को छोड़ देता है और अन्न आदि भारी वस्तुओं को रख लेता है

उसी प्रकार मनुष्य को भी संसार में असार बातों को छोड़ देना चाहिए औ
तत्व की बातों का संग्रह कर लेना चाहिए ।

(२३८)

रहिमन यों सुख होत है बढ़त देखि निज गोत ।
ज्यों बड़री अँखियाँ निरखि आँखिन को सुख होत ॥

अर्थ—रहीम जी कहते है कि जिस प्रकार बड़ी बड़ी आँखों को देख कर
आँखों को सुख का अनुभव होता है उसी प्रकार अपने गोत्र को बढ़ते हुए देख
कर मनुष्य को सुख प्रतीत होता है ।

(२३९)

रहिमन रजनी ही भली पिय सों होय मिलाप ।
खरो दिवस किहि काम को रहिबो आपुहि आप ॥

अर्थ—रहीम जी कहते है रात्रि ही अच्छी होती है जिसमे अपने प्रि
मिलन होता है । यह दिन किस काम का जिसम अकेले अपने आप को
रहना पड़ता है ।

(२४०)

रहिमन रहिला की भली जो परसै चित लाय ।
परसत मन मैला करै सो मैदा जरि जाय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते है यदि चने की रोटी भी प्रसन्न चित होकर दी
तो वह अच्छी किन्तु मैदा की बनी हुई वस्तु जिसको देते समय चित दुखी
तो किसी प्रकार भी अच्छी नहीं । उसको तो आग मय जाय तो अच्छा ।

(२४१)

रहिमन राज सराहिये ससि सम सुखद जो होय ।
कहा बापुरो भानु है तप्यो तरैयन खोय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते है कि उस राज्य की ही प्रशंसा करनी चाहिए जो
लिए चन्द्र के समान सुखदायक हो । उस बेचारे सूर्य का क्या कहना
तारों को समाप्त कर के एकाकी ही तपता है ।

—कहा जाता है कि इस दोहे की रचना रहीम जी ने उस समय
जहाँगीर ने राज्य प्राप्त करने के लिए भाइयों का वध किया था ।

(२४२)

रहिमन रिस को छाँड़ि के, करौ गरीबी भेस।
मीठा बोलो नै चलो सबै तुम्हारी देस॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि क्रोध को त्याग कर गरीब व्यक्तियों के समान आचरण करो। सबसे मधुर वाणी से बोलो। विनम्र होकर चलो तब तो सभी स्थान तुम्हारे अपने हो जाएँगे।

(२४३)

रहिमन रिस सहि तजत नहिं बड़े प्रीति की पौरि।
मूकनि मारति आवई नींद बिचारी दौरि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं बड़े लोग क्रोध को सह लेते हैं और प्रेम की मर्यादा को नहीं छोड़ते। जब पैर दबाने के बहाने पैरों पर मुक्के मारे जाते हैं तब भी बेचारी नींद दौड़ कर आ ही जाती है।

(२४४)

रहिमन रीति सराहिये जो घट गुन सम होय।
भीति आप पै डारि के सबै पियावै तोय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि उस व्यवहार की सराहना की जानी चाहिए जो घड़े और रस्सी के व्यवहार के समान हो। घड़ा और रस्सी स्वयं जोखिम उठा कर दूसरों को जल पिलाते हैं। जब घड़ा कुएं में जाता है तो रस्सी के टूटने और घड़े के फूटने का डर तो रहता ही है।

(२४५)

रहिमन बिस अधर्म को जरत न लागै बार।
चोरी करि होरी रची, भई तनिक में छार॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि अधर्म का धन समाप्त होते (जलते) देर नहीं लगती। चोरी करके वस्तुएं होली में डाल देते हैं पर थोड़ी ही देर में सब कुछ जल कर राख हो जाता है।

(२४६)

रहिमन विद्या बुद्धि नहीं, नहीं धरम जस दान।
भू पर जनम वृथा धरै पसु बिनु पूंछ बिषान॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि जिनके पास न तो विद्या है न बुद्धि है जिन्होंने न तो धर्म किया है न यश अर्जित किया है और न दान दिया है उनका पृथ्वी पर जन्म लेना व्यर्थ है। वे लोग तो बिना पूँछ और सींग के पशु हैं।

(२४७)

रहिमन विपदा हू भली जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में जानि परत सब कोय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि आपत्ति कुछ समय की हो तो वह आपत्ति भी अच्छी है, क्योंकि आपत्ति में ही सब के विषय में जाना जा सकता है कि संसार में कौन हितू है और कौन अहितकारी है।

(२४८)

रहिमन वे नर मर चुके जे कहुँ माँगन जाँहि।
तिन ते पहिले वे मरे, जिन्ह मुख निकसत नाँहि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि माँगना बुरा है किन्तु माँगने वाले को कुछ न देना उससे भी बुरा है। जो मनुष्य किसी से माँगने जाते हैं वे तो मृतक के समान हैं किन्तु जो याचक को कुछ भी देने से साफ मना कर देते हैं उनको उनसे भी पहले मरा हुआ समझना चाहिए।

(२४९)

रहिमन सुधि सबसे भली, लगी जो बारंबार।
बिछुरे मानुष फिर मिलैं यहै जान अवतार॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि स्मृति यदि बार बार आती है तो वह सबसे अच्छी वस्तु है। बिछुड़े हुए मनुष्य पुनः मिलते हैं तो इस मिलन को ही अवतार समझना चाहिए।

(२५०)

राम न जाते हरिन संग सीय न रावन साथ।
जो रहीम भावी कतहुँ, होत आपने हाथ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि होनहार अपने ही हाथ में होती तो न तो राम स्वर्ण मृग के पीछे जाते और अथवा न सीता ही रावण के साथ लंका जाती। तब राम रावण का युद्ध भी नहीं होता।

(२५१)

रीति प्रीति सबसों भली बैर न हित मित गोत।
रहिमन याही जनम की बहुरि न संगति होत॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि सबसे प्रेम का व्यवहार ही अच्छा है शत्रुता हितकर नहीं। इस जन्म की मित्रता और संबंध तो इसी जन्म में रहते हैं अगले जन्मों में पुनः इन मित्रों और सम्बन्धियों से मिलन नहीं हो पाता।

(२५२)

रूप कथा पद चारु पट, कंचन दोहा लाल।
ज्यों-ज्यों निरखत सूक्ष्म गति मोल रहीम बिसाल॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि रूप कथा पद सुन्दर वस्त्र सोना दोहा और माणिक्य—इनको जितनी सूक्ष्म दृष्टि से देखते हैं उतना ही इनका मूल्य बढ़ता जाता है। अभिप्राय है कि इन सबका वास्तविक मूल्य सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर ही ज्ञात होता है, ऊपरी निगाह से देखने पर नहीं।

(२५३)

लिखी रहीम लिलार में भई आन की आन।
पद कर काटि बनारसी, पहुँचे मगहर-स्थान॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब भाग्य में लिखा होता है तो कुछ का कुछ हो जाता है जैसे बनारस का रहने वाला हाथ पैर काट लेने पर भी मृत्यु के समय मगहर पहुँच गया था।

विशेष—ऐसा कहा जाता है कि काशी में मृत्यु पर मुक्ति होती और मगहर में मरने से नहीं। 'भक्तमाल' में इस आशय की एक कथा है कि एक

मनुष्य काशीवास करने लगा और उसने अपने पैर हाथ इसलिए काट लि
जिससे अन्त समय वह काशी से बाहर न जा सके। पर दुर्भाग्य
एक घोड़ा उसको मगहर ले गया और वहीं उसकी मृत्यु हुई। दोहे में इस
ओर संकेत है।

(२५४)

जब रहीम कानन बसो बास करिय फल भोग।
बंधु-मध्य धन हीन ह्वै बसिबो उचित न योग॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बन्धु बान्धवों के बीच में निर्धन होक
रहना उचित नहीं है। इससे तो वन में निवास करना और फलों को भोज
करना अधिक अच्छा है।

(२५५)

वे रहीम नर धन्य हैं पर उपकारी अंग।
बाँटन वारे को लगै, ज्यों मेंहदी को रंग॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि वह मनुष्य धन्य है जिसका शरीर दूसरों के
उपकार में लगा रहता है। जिस प्रकार मेंहदी बाँटने वाले के शरीर में भी मेंहदी
का रंग लग जाता है वही प्रकार परोपकारी का शरीर भी सुशोभित होता है

(२५६)

सबै कहावैं लसकरी, सब लसकर कहँ जाय।
रहिमन सेल्ह जोई सहै सोई जगीर खाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि वैसे तो सभी सैनिक सैनिक नाम से
पुकारे जाते हैं और सभी फौज में भी जाते हैं, पर जो भालों की चोट सह
करता है उसी को जागीर पुरस्कार में मिलती है।

(२५७)

समय परे ओछे बचन, सबके सहै रहीम।
सभा दुसासन पट गहे गदा लिए रहे भीम॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि अवसर आने पर दूसरों की कुछ बातों को
भी सह लेना चाहिए। दुर्योधन की सभा में दुःशासन ने द्रौपदी के वस्त्र का
अपहरण किया किन्तु बलशाली भीम अपनी गदा लिए चुपचाप बैठे रहे।

विशेष—जब युधिष्ठिर जुए में अपने सारे राज्य को चारों भाइयों और द्रोपदी को हार गए तब दुर्योधन को कुटिलता सूझी। दुर्योधन के आदेश से दुःशासन द्रोपदी को बाल पकड़ कर सभा में घसीट लाया और उसको नग्न करने के लिए उसका वस्त्र खींचने लगा। पाँचों पाण्डव बैठे रहे। भीम सब में अधिक बलशाली था फिर भी जुए में हारा होने से कुछ न कर सका। उसे क्रोध पीकर रह जाना पड़ा। तब भगवान कृष्ण ने द्रोपदी का चीर बढ़ा कर उसकी लाज रखी।

(२१८)

समय पाय फल होत है समय पाइ झरि जात।
सदा रहै नहिं एक सी का रहीम पछितात॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि उपयुक्त समय आने पर वृक्ष में फल लगता है और झड़ने का अवसर आने पर झड़ जाता है। सदा किसी की अवस्था एक जैसी नहीं रहती इसलिए दुःख के समय पछताना व्यर्थ है।

(२१९)

समय लाभ सम लाभ नहि, समय चूकि सम चूक।
चतुरन चित रहिमन लगी समय चूक की हूक॥

अर्थ—उपयुक्त अवसर का लाभ उठाने के समान कोई लाभ नहीं है और उपयुक्त अवसर को खो देने के समान कोई गलती नहीं है। रहीम जी कहते हैं चतुर लोगों के हृदय में उपयुक्त अवसर के निकल जाने पर उसका पछतावा बना ही रहता है।

(२१)

सरवर के खग एक से, बाढ़त प्रीति न धीम।
पै मराल को मानसर एकै ठौर रहीम॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जलाशय पर रहने वाले पक्षी सब समान होते हैं। उनका प्रेम न तो बढ़ता है और न घटता है परन्तु हंस का निवास स्थान तो केवल मानसरोवर ही होता है। अन्य पक्षी तो विभिन्न जलाशयों पर जाते हैं पर हंस का प्रेम एक मात्र मानसरोवर से होता है।

(२११)

स्वारथ रचत रहीम सब, औगुनहू जग माँहि।
बड़े बड़े बैठे लखौ, पथ रथ कूबर छाँहि॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि संसार में सब लोग अवगुणों से भी स्वार्थ सिद्धि कर लेते हैं। मार्ग में रथ के कूबर की छाया में बड़े बड़े लोग बैठे दिखाई देते हैं। प्राय धूप से बचने के लिए मार्ग में खड़े हुए रथ के उस भाग के नीचे लोग बैठ जाते हैं जहाँ जुआ बाँधा जाता है।

(२१२)

स्वासहु तुरिय जो उच्चरै तिय है निहचल चित्त।
पूत परा घर जानिये रहिमन तीन पवित्त॥

अर्थ—मोक्ष की अवस्था देने वाले 'सोऽहं' की ध्वनि का उच्चारण करने श्वास स्थिर चित्त वाली स्त्री तथा घर में सपूत बेटा ये तीनों पवित्र होते हैं।

(२१३)

साधु सराहै साधुता जती जोखिता जान।
रहिमन साँचे सूर को बैरी करै बखान॥

अर्थ—रहीम कहते हैं—इस बात को समझ लो कि सज्जन पुरुष सज्जनता की प्रशंसा करता है यती योगीपन की प्रशंसा करता है और सच्चे वीर के शौर्य की प्रशंसा उसका शत्रु भी करता है।

(२१४)

संपति भरम गँवाइ कै हाथ रहत कछु नाँहि।
ज्यों रहीम ससि रहत है, दिवस प्रकासहि माँहि॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार दिन में चन्द्रमा आभाहीन हो जाता है उसी प्रकार कोई व्यक्ति किसी व्यसन में फँस कर अपना धन गँवा बैठते हैं और वे निष्प्रभ हो जाते हैं।

(२१५)

ससि की शीतल चाँदनी, सुन्दर सबहि सुहाय।
लगे चोर चित में लटी, घटि रहीम मन आय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि चन्द्रमा की शीतल चाँदनी सुन्दर होती है और सभी को रुचिकर लगती है परन्तु चोर के चित्त को यह बुरी लगती है और उसके मन में बुरी भावनाएं आती हैं।

(२६६)

ससि, सकोच साहस, सलिल, मान सनेह रहीम।
बढ़त बढ़त बढ़ि जात है, घटति घटति घटि सीम॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि चन्द्रमा संकोच साहस जल (नदी आदि का) सम्मान और प्रेम ये सब बढ़ते बढ़ते बहुत बढ़ जाते हैं। पर जब ये घटते हैं तो घटते घटते सीमा तक पहुँच जाते हैं—लुप्त हो जाते हैं।

(२६७)

होत कृपा जो बड़ेन की, सो कदापि घटि जाय।
तौ रहीम मरिबो भलो यह दुःख सह्यो न जाय॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बड़े लोगों की जो कृपा हम पर होती है यदि वह कम हो जाय तो इस दुःख को सहने की अपेक्षा मर जाना अधिक अच्छा है क्योंकि यह दुःख सहा नहीं जा सकता है।

(२६८)

मोहे जो सतसंग रहिमन तजहूँ अंगार ज्यों।
तातो जारै अंग सीरे पै कारो लगै॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि क्षुद्र मनुष्य का साथ अंगार के साथ समान होता है अतः उसको छोड़ देना चाहिए। अंगार जब तक गरम रहता है, तब तक शरीर को जलाता है और जब ठंडा हो जाता है तो शरीर को काला कर देता है इस तरह दोनों ही अवस्थाओं में उससे हानि होती है।

(२६९)

रहिमन जग की रीति मैं देख्यो रस ऊख मैं।
ताहू में परतीति जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जहाँ पर गाँठ (मनोमालिन्य) होती है वहाँ

रस (प्रेम) नहीं रहता है। यही संसार की रीति है। जैसे ईख (गन्ना) में रस पर वहाँ भी वही विश्वास हो गया कि गाँठ में रस नहीं होता।

(२७०)

रहिमन नीर पखान, बूड़ै पै सीझै नहीं।
तैसे मूरख ज्ञान, बूझै पै सूझै नहीं॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार जल पड़ा होने पर भी पत्थर नरम नहीं होता उसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति की अवस्था होती है। ज्ञान दिए जाने पर भी मूर्ख की समझ में कुछ नहीं आता।

भावसाम्य— मूरख हृदय न चेत जो गुरु मिलहिं बिरंचि सम।

(२७१)

रहिमन बहुरा बाज गगन चढ़े फिर क्यों तिरै।
पेट अधम के काज फेर आय बंधन परै॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि पेट के लिए व्यक्ति को क्या नहीं करना पड़ता? बाज जब एक बार मुक्त होकर आकाश में चढ़ जाता है (पक्षियों के शिकार के लिए) तो फिर वह पृथ्वी पर क्यों उतरे? किन्तु नीच पेट को भरने के लिए वह पुनः शिकारी के पास आकर बन्धन में पड़ जाता है।

(२७२)

रहिमन मोहिं न सुहाय अमी पियावै मान बिनु।
बरु विष देय बुलाय मान सहित मरिबो भलो॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यदि मुझको कोई सम्मान के बिना अमृत भी पिलाये तो मुझे अच्छा नहीं लगेगा और यदि कोई सम्मानपूर्वक बुलाकर जहर भी दे तो अच्छा है क्योंकि सम्मानहीन जीवन से सम्मान सम्मान सहित मृत्यु भली।

(२७३)

माह मास लहि टेसुआ मीन परे थल और।
त्यों रहीम जग जानिए, छुटे आपुने ठौर॥

अर्थ—माघ मास आने पर टेसू का वृक्ष और पृथ्वी पर पड़ने पर मछली

की दशा बदल जाती है उसी प्रकार संसार में अपने स्थान के छूट जाने पर संसार की अन्य वस्तुओं की दशा होती है। जिस प्रकार मछली जल से पृथ्वी पर आ जाने पर मर जाती है उसी प्रकार अन्य वस्तुओं की हालत होती है।

(२७४)

बाँकी चितवन चित गड़ी सूधी तो कछु धीम।
गाँसी ते बढ़ि होत दुख, काढ़ि न सकत रहीम॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि टेढ़ापन बड़ा दुखदायी होता है। टेढ़ी चितवन हृदय में गड़ जाती है, सीधी उतनी नहीं गड़ती। टेढ़ी बात (चुभने वाली बात) से हृदय को बड़ा दुख होता है। और जब टेढ़ी चितवन अथवा कुटिल बात मन में घुस जाती है तो निकालने पर भी नहीं निकल पाती।

(२७५)

आदर घटे नरेस ढिग बसे रहे कछु नाहिं।
जो रहीम कोटिन मिले धिक जीवन जग माहिं॥

अर्थ—नरेश के पास में जाने से आदर घटता है वैसे पास में बसे रहो तो कुछ नहीं है। लेकिन अनेक बार मिल कर अपना अपमान करना तो निश्चय धिक्कार के योग्य है।

(२७६)

रहिमन चाक कुम्हार को माँगे दिया न देइ।
छेद में डंडा डारि कै चहै नाँद लै लेइ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि कुम्हार को चाक अनुनय से माँगने पर दीपक भी बनाकर नहीं देता लेकिन जब कुम्हार चाक के छेद में अपना डंडा डालकर घुमाता है तो दीपक तो छोटी सी चीज है—वह बड़ी नाँद (मिट्टी का बड़ा पात्र) तक बनाकर दे देता है। भावार्थ यह है कि सीधी तरह माँगने पर कोई भी छोटी सी चीज तक देने को तैयार नहीं होता और जोर जबरन करने पर मजबूरी वश बड़ी-बड़ी चीजें तक दे देनी पड़ती हैं।

विशेष—"छेद में डंडा डारि कै"

में अर्थ अश्लीलता का भी द्योतक है अतः यहाँ अश्लीलत्व दोष पाया गया है।

(२७७)

यह रहीम निज संग सी जनमत जगत न कोय।
बैर प्रीति अभ्यास जस होत होत ही होय॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि शत्रुता प्रीति अभ्यास और यश इनको कोई भी व्यक्ति जन्म से जगत में साथ नहीं लाता अपितु धीरे-धीरे ही ये चीजें प्राप्त होती हैं। जैसे धीरे-धीरे वृद्धि पाकर ही शत्रुता और प्रेम होता है। अभ्यास और यश भी एकदम प्राप्त नहीं होता अपितु इसके लिये भी कुछ समय की अपेक्षा होती है।

(२७८)

ये रहीम फीके दुवौ, जानि महा सतापु।
ज्यों तिय कुच आपन गहे आप बड़ाई आप॥

अर्थ—स्पष्ट नहीं है।

(२७९)

रहिमन कठिन चितान ते चिंता को चित चेत।
चिता दहति निर्जीव को, चिंता जीव समेत॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि चिता से अधिक कष्टप्रद चिन्ता होती है जो चित्त को दग्ध करती रहती है। चिता निर्जीव (शव) को ही जलाती है लेकिन चिन्ता तो सदेह (जिन्दा) मनुष्य को ही जलाती रहती है।

भावसाम्य—'चिता चिन्ता समाख्याता बिन्दुमात्र विशेषतः।
चिता दहति निर्जीवं चिन्ता दहति सजीवकं॥

(२८०)

रूप विलोकि रहीम तहँ जहँ जहँ मन लगि जाय।
याके ताकहिं आप बहु, लेत छोड़ाय छोड़ाय॥

अर्थ—रूप को देखकर जहाँ जहाँ मन लग जाता है वहाँ मन को हटाने की बार-बार कोशिश की जाती है लेकिन मन देखते-देखते बचता नहीं है।

(२८१)

रहिमन वा डर निसि परैं ता दिन डर कर सोय।
पल-पल कर के लागते देखु कहाँ धौं होय॥

अर्थ—अस्पष्ट है।

(२८२)

चाह गई चिन्ता मिटी मनुआ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिए, वे साहन के साह॥

अर्थ—किसी प्रकार की इच्छा न होने पर चिन्ता भी समाप्त हो गई फलतः मन अब बेपरवाह हो गया। किसी वस्तु की चाह होने पर ही उसको प्राप्त करने के लिये चिन्ता उत्पन्न होती है और चिन्ता ही मनुष्य को उलझनों में डाले रहती है अतः चिन्ता के समाप्त होने पर मनुष्य भी बेफिक्र हो जाता है। और जिस मनुष्य को किसी वस्तु की कामना नहीं रहती वह ईश्वर के ध्यान में मग्न हो जाता है।

(२८३)

चिन्ता बुद्धि परेखिए, टोटे परख त्रियाहिं।
सगे कुबेला परखिए, ठाकुर गुनो कि आहि॥

अर्थ—चिन्ता के समय बुद्धि की परख की जा सकती है क्योंकि चिन्ता ग्रस्त व्यक्ति को बुद्धि द्वारा ही मार्ग-दर्शन मिलता है। धन के घाटे के वक्त स्त्री की परख होती है क्योंकि धनाभाव में भी स्त्री साथ दे तो उसका प्रेम सच्चा समझना चाहिये। बुरे समय में सगे-सम्बन्धियों की परख होती है और ठाकुर की परख कर्म से होती है।

(२८४)

तासों ही कछु पाइये कीजे जाकी आस।
रीते सरवर पर गए कैसे बुझे पियास॥

अर्थ—जिससे कुछ प्राप्ति हो सके उससे किसी वस्तु की आशा करना उचित है क्योंकि पानी से रिक्त तालाब से प्यास की तृप्ति करना व्यर्थ ही होगा।

(२७७)

यह रहीम निज संग लै, जनमत जगत न कोय।
बैर, प्रीति अभ्यास जस होत होत ही होय॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि शत्रुता प्रीति अभ्यास और यश इनको कोई भी व्यक्ति जन्म से जगत में साथ नहीं लाता अपितु धीरे-धीरे ही ये चीजें प्राप्त होती हैं। जैसे धीरे-धीरे वृद्धि पाकर ही शत्रुता और प्रेम होता है। अभ्यास और यश भी एकदम प्राप्त नहीं होता अपितु इसके लिये भी कुछ समय की अपेक्षा होती है।

(२७८)

ये रहीम फीके दुवो जानि महा सतापु।
ज्यों तिय कुच आपन गहे आप बड़ाई आप॥

अर्थ—स्पष्ट नहीं है।

(२७९)

रहिमन कठिन चितान ते चिंता को चित चेत।
चिता दहति निर्जीव को, चिन्ता जीव समेत॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि चिता से अधिक कष्टमय चिन्ता होती है जो चित्त को दग्ध करती रहती है। चिता निर्जीव (शव) को ही जलाती है लेकिन चिन्ता तो सदेह (जिन्दा) मनुष्य को ही जलाती रहती है।

भावसाम्य—'चिता चिन्ता समाख्याता बिन्दुमात्र विशेषता।
चिता दहति निर्जीवं चिन्ता दहति सजीवकं॥'

(२८०)

रूप बिलोकि रहीम तहँ जहँ जहँ मन लगि जाय।
थाके ताकहिं आप बहु, लेत छोड़ाय छोड़ाय॥

अर्थ—रूप को देखकर जहाँ जहाँ मन लग जाता है वहाँ मन को हटाने की बार-बार कोशिश की जाती है लेकिन मन देखते-देखते थकता नहीं है।

(२८१)

रहिमन या डर निसि पर ता दिन उर कर सोय।
पल-पल कर के लागते देखु कहाँ धौं होय ॥

अर्थ—अस्पष्ट है।

(२८२)

चाह गई चिन्ता मिटी मनुआ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिए, वे साहन के साह ॥

अर्थ—किसी प्रकार की इच्छा न होने पर चिन्ता भी समाप्त हो गई फलत: मन अब बेपरवाह हो गया। किसी वस्तु की चाह होने पर ही उसको प्राप्त करने के लिये चिन्ता उत्पन्न होती है और चिन्ता ही मनुष्य को उलझनों में डाले रखती है अत: चिन्ता के समाप्त होने पर मनुष्य भी बेफिक्र हो जाता है। और जिस मनुष्य को किसी वस्तु की कामना नहीं रहती वह ईश्वर के ध्यान में मग्न हो जाता है।

(२८३)

चिन्ता बुद्धि परेखिए, टोटे परख त्रियाहि।
सगे कुबेला परखिए, ठाकुर गुनो कि आहि ॥

अर्थ—चिन्ता के समय बुद्धि की परख की जा सकती है क्योंकि चिन्ता ग्रस्त व्यक्ति को बुद्धि द्वारा ही मार्ग-दर्शन मिलता है। धन के घाटे के वक्त स्त्री की परख होती है क्योंकि धनाभाव में भी स्त्री साथ दे तो उसका प्रेम पक्का समझना चाहिये। बुरे समय में सगे-सम्बन्धियों की परख होती है और ठाकुर की परख कर्म से होती है।

(२८४)

तासों ही कछु पाइये कीजे जाकी आस।
रीते सरवर पर गए, कैसे बुझे पियास ॥

अर्थ—जिससे कुछ प्राप्ति हो सके उससे किसी वस्तु की आशा करना उचित है क्योंकि पानी से रिक्त तालाब से प्यास की तृप्ति करना व्यर्थ ही होगा।

(२८५)

लोहे की न लोहार की रहिमन कही विचार।
जा हनि मारे सीस पै, ताही की तलवार॥

अर्थ—रहीम विचार करके कहते हैं कि तलवार न तो लोहे की कही जायेगी और न लोहार की अपितु तलवार उस वीर की ही कही जायेगी जो वीरता से शिर पर मार कर प्राणों का अन्त कर देता है।

(२८६)

मनि मानिक महँगे किये, सँहगे तृन जल नाज।
रहिमन याते कहत हैं राम गरीब नेवाज॥

अर्थ—मणि-माणिक्य जैसी अमीरों के विलास की वस्तुओं को तो भगवान् ने महँगा कर दिया है और दीन प्राणियों और गरीब मनुष्यों के काम में आने वाली वस्तुएँ—घास जल और अन्न को सस्ता ही रखा है ताकि वे आसानी से अपनी क्षुधा तृप्ति कर जीवन-निर्वाह कर सकें। कविवर रहीम इस बात को दृष्टिगत करते हुए कहते हैं कि इसीलिए ठीक ही भगवान् को गरीबों का ध्यान रखने वाले दीनबन्धु नाम से सम्बोधित किया जाता है।

भावसाम्य— तुलसी जानै सुनि समुझि, कृपासिन्धु रघुराज।
महँगे मनि कंचन किए, सोंधे जग जल नाज॥

(२८७)

धन दारा अरु सुतन सों लगा रहे नित चित्त।
नहिं रहीम कोऊ लख्यौ गाढ़े दिन को मित्त॥

अर्थ—सम्पत्ति स्त्री और सन्तानों में ही मनुष्य का मन सर्वदा रमा रहता है लेकिन विपत्ति काल मे काम इनमें से आने वाला कोई भी दृष्टिगोचर नहीं होता।

(२८८)

रहिमन बिब्राह बियाधि है सकहु तो जाहु बचाय।
पाँयन बेड़ी परत है ढोल बजाय बजाय॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि विवाह एक व्याधि के समान है—इस व्याधि से बच सकते हो तो अवश्य बचो। ढोल बजा-बजाकर और आमन्त्रित करके मनुष्य के पैरों में बेड़ियाँ डाल दी जाती हैं और वह आजन्म बन्धन में पड़ जाता है।

(२०९)

रहिमन सूधी चाल तें प्यादा होत उजीर।
फरजी मीर न ह्वै सकै, टेढ़े की तासीर॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि सीधी चाल ही श्रेयस्कर होती है क्योंकि शतरंज के खेल में सीधी चाल चलकर ही प्यादा वजीर तक हो जाता है और फरजी टेढ़ा चलने के कारण मीर भी नहीं बन पाता।

(२१०)

रहिमन खोटे ऊख में जहाँ रसन की खानि।
जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं, यही प्रीति में हानि॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि गन्ना रस की खान है किन्तु उसकी गाँठ में जहाँ कि रस अधिक होना चाहिये वहीं पर रस नहीं होता। ऐसे ही प्रीति में गाँठ पड़ जाने पर प्रेम नहीं रहता।

(२११)

जो विषया संतन तजी मूढ़ ताहि लिपटात।
ज्यों नर डारत वमन कर, स्वान स्वाद सो खात॥

अर्थ—सन्त मनुष्यों ने जिन विषय वासनाओं का त्याग कर दिया है उन्हीं विषय-वासनाओं में मूर्ख मनुष्य लिप्त होते हैं। जैसे कि मनुष्य जिसे वमन करके त्याग देता है—कुत्ते उसे बड़े ही स्वाद से ग्रहण करते हैं।

(२१२)

हरी हरी करना करी सुनी जो सब ना टेर।
जग डग भरी उतावरी, हरी करी की बेर॥

अर्थ—कविवर रहीम भगवान् की भक्तवत्सलता का परिचय देते हुए कहते हैं कि हरि ने प्रार्थना सुन करुणा करके दुःख का हरण किया। जब गजराज पर प्राणों का संकट पड़ गया था तो उसकी करुणार्द्र पुकार को सुनकर वे उतावले होकर आये थे और गजराज के दुःख को हर लिया था अर्थात् उसके संकट का निवारण कर दिया था।

विशेष—पौराणिक कथा है कि गजराज स्नान करते समय मगर के चंगुल में फँस गया था और उसके प्राणों पर घोर संकट आ गया था। उस समय दीन होकर गजराज ने भगवान् को पुकारा था और भगवान् विष्णु भक्त की कातर पुकार सुनकर तत्काल गजराज का संकट दूर करने गये थे।

अलङ्कार—अनुप्रास, पुनरुक्तिप्रकाश और यमक।